अमरकान्त की कहानियाँ - एक अध्ययन

Short Stories of Amarkanth - A Study

DISSERTATION SUBMITTED TO THE
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
FOR THE DEGREE OF MASTER OF PHILOSOPHY

By
CHENGALVALA RADHAKRISHNA

Supervising Teacher
Dr. A. ARVINDAKSHAN
READER

Professor and Head of the Department
Dr. N. RAMAN NAIR
DEAN, FACULTY OF HUMANITIES

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
COCHIN-22

1987

C E R T I F I C A T E

This is to certify that this DISSERTATION is a bonafide record of work carried out by Chengalvala Radhakrishna, under my supervision for M.Phil and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any university.

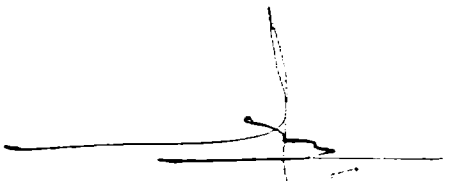

Dr. A. ARVINDAKSHAN
(Supervising Teacher).

Department of Hindi,
Cochin University of Science
and Technology,
COCHIN-682 022.

पुरोवाक्

हिन्दी कथा-साहित्य के इतिहास में "नयी कहानी" आन्दोलन का महत्त्वपूर्ण स्थान है । इस आन्दोलन ने हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में प्रचलित कई जड़ रूढ़ियों एवं मान्यताओं को ध्वस्त किया । इस आन्दोलन ने हिन्दी कथा-साहित्य को एक नूतन एवं स्वस्थ दृष्टि दी और इस प्रकार हिन्दी कथा-साहित्य को प्रयोजनयुक्त बनाया ।

"नयी कहानी" आन्दोलन के दौरान कई प्रतिभाशाली कहानीकार उभर कर सामने आये और इन कहानीकारों ने अपनी प्रतिभा का परिचय देते हुए हिन्दी कथा-साहित्य को समृद्ध बनाया । इस आन्दोलन के दौरान कुछ कहानीकार ऐसे भी थे जिनकी आन्दोलन में प्रत्यक्ष रूप से भूमिका न निभाने के कारण घोर उपेक्षा हुई । लेकिन जब कभी आलोचकों ने "नयी कहानी" की उपलब्धियों की चर्चा की तब ऐसे उपेक्षित कहानीकारों की कहानियों की चर्चा भी की जो इस बात का प्रमाण है कि ये उपेक्षित कथाकार स्वस्थ सामाजिक दृष्टि रखने वाले थे ।

ऐसे ही प्रतिभावान परन्तु "नयी कहानी" आन्दोलन के दौरान आलोचकों द्वारा लगभग अछूते रहे कहानीकार हैं - अमरकान्त । अमरकान्त की कहानी "बस्ती" जब मैं ने एम·ए· करते वक्त पढ़ी तो इस कहानी ने मुझे बेहद प्रभावित किया और इस कहानी ने ही मुझे यह प्रेरणा दी कि मैं अमरकान्त की कहानियों का समग्र अध्ययन कर उनकी प्रतिभा को प्रकाश में लाऊँ ।

जब मैं ने अमरकान्त की कहानियों का अध्ययन शुरू किया तो मेरी जिज्ञासा उनकी कहानियों के प्रति निरन्तर बढ़ती गई और मुझे उनकी कहानियों में ऐसे लक्षण दिखाई दिए जो मौजूदा सामाजिक-व्यवस्था में भी प्रासंगिक है । अमरकान्त की कहानियाँ इस अर्थ में विशेषता रखती है कि वे अपनी सामाजिक विचार धारा को अपनी रचना पर नहीं लादते वरन् बड़ी ही निर्मम तटस्थता का परिचय देते हुए स्थिति में छिपे हुए व्यंग्य, विद्रूप, आतंक आदि को प्रत्यक्ष कर देते हैं । यह बात सही है कि अन्य नये कहानीकारों ने भी सामाजिक यथार्थ को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है, पर इन कहानीकारों मे अमरकान्त की पहचान बिल्कुल अलग है । अमरकान्त अपनी रचनाओं को "सामाजिक यथार्थ" के नाम पर प्रचार-प्रसार का विषय नहीं बनाते हैं । यह बात भी उल्लेखनीय ही है कि जहाँ अमरकान्त के अन्य समकालीन कहानीकार आतंक भरी स्थितियों का चित्रण करते समय भावुकता के फेरे में पड़ गये हैं वहाँ अमरकान्त भावुकता से साफ बच निकले हैं । अमरकान्त की कहानियों में जो करुण-प्रसंग देखने को मिलते हैं, वे भावुकता भरी स्थितियों को प्रत्यक्ष नहीं करते, बल्कि पात्रों के अन्तर्विरोधों उजागर करते हैं ।

अमरकान्त इस अर्थ में भी अपने अन्य समकालीन कहानीकारों से अलग ही हैं कि उन्होंने जान-बूझकर कहानी के शिल्प को "प्रयोग" के

नाम पर दुरूह नहीं बनाया है । उन्होंने अत्यंत सहज और सीधे-सादे शिल्प को अपनाया है । उनकी कहानियों का शिल्प प्रेमचन्द की कहानियों के शिल्प का ही विकसित रूप लगता है । प्रेमचन्द के समान ही उनकी कहानियों की भी शुरूआत अक्सर विवरणों से ही होती है । प्रेमचन्द के समान ही लोकजीवन में प्रचलित मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग अमरकान्त खुलकर करते हैं ।

"नयी कहानी", आन्दोलन के दौरान कुछ प्रतिष्ठित लेखकों पर ही आलोचकों ने ज्यादा ध्यान दिया है, अत: अमरकान्त पर बहुत कम ही आलोचनात्मक सामग्री उपलब्ध हो सकी है । यह एक तरह से इस अध्ययन में लाभदायक भी सिद्ध हो सकती है क्योंकि मैं समझता हूँ कि अमरकान्त पर कम आलोचनात्मक सामग्री की उपलब्धि के कारण मेरे विचार बहुधा मौलिक भी हो सकते हैं ।

प्रस्तुत शोध - प्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभक्त हैं ।

पहला अध्याय "नई कहानी" के अध्ययन-विश्लेषण से संबंधित है । इस अध्याय में "नई कहानी" को जन्म देने वाली ऐतिहासिक परिस्थितियों तथा संदर्भों की चर्चा की गई है । "नयी कहानी" के नामकरण को लेकर जितने वाद-विवाद हुए उनकी चर्चा की गई है और नई कहानी को एक स्वस्थ सामाजिक दृष्टि के फलस्वरूप उपजी परंपरा के रूप में साबित किया गया है । नयी कहानी की प्रवृत्तियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करके उसकी खूबियों को प्रकाश में लाया गया है ।

दूसरा अध्याय अमरकान्त के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से संबंधित है । इस अध्याय में अमरकान्त के रचना-व्यक्तित्व की प्रेरक परिस्थितियों, व्यक्तियों आदि की चर्चा की गई है । साथ ही, इस अध्याय में यह भी दिखाने की चेष्टा की गई है कि अमरकान्त का सर्जक-व्यक्तित्व किस प्रकार विकसित हुआ है ।

तीसरे अध्याय में अमरकान्त की कहानियों के विश्लेषणात्मक अध्ययन द्वारा उनकी कहानियों की खास-प्रवृत्तियों को सामने लाया गया है । इस अध्याय में अमरकान्त की सभी उपलब्ध कहानियों की चर्चा करने की चेष्टा की गई है और तदोपरान्त उन कहानियों में प्रकट अमरकान्त की खास-दृष्टि को भी उजागर किया गया है । यह अध्याय मुख्यत: अमरकांत की कहानियों की प्रवृत्तियों के अध्ययन से ही संबंध रखता है ।

चौथे अध्याय में अमरकान्त के सामाजिक चिन्तन की चर्चा की गई है । अमरकान्त की सामाजिक दृष्टि के विभिन्न पहेलुओं को उजागर करने का प्रयास किया गया है ।

पाँचवाँ अध्याय अमरकान्त की कहानियों के शिल्प से संबंधित है । इस अध्याय में अमरकान्त के शिल्प की बारिकियों को पकडने की कोशिश की गई है । उनके शिल्प के विभिन्न पहेलुओं तथा उनकी शिल्पगत सादगी को इस अध्याय में प्रस्तुत किया गया है । साथ ही, इस अध्याय में इस बात को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि अमरकान्त का शिल्प अन्य समकालीनों की तरह चमक-दमक के अभाव में भी क्यों अपनी विशिष्टता लिये हुये हैं ।

यह शोध-कार्य कोचीन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर डॉ॰ ए॰ अरविन्दाक्षन के निर्देशन में सम्पन्न हुआ है । समय-समय पर दिये गये उनके विद्वतापूर्ण सुझावों तथा मार्गदर्शन केलिए मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ ।

कोचीन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रोफसर एवं अध्यक्ष डॉ॰ एन॰ रामन नायर ने इस कार्य की पूर्ति में जो नैतिक-समर्थन दिया है तथा मुझ पर जो सहृदयता प्रकट की है उसके लिये मैं उनका आभारी हूँ ।

कोचीन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की पुस्तकालय अध्यक्षा श्रीमती कुंञ्ञीकावुट्टी तंपुरान तथा सहायक श्री.असीस के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ ।

चेंगलवला राधाकृष्ण

हिन्दी विभाग,
कोचीन विज्ञान व प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कोचीन-22·

अनुक्रम

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - एक ... ... 1 - 31

नयी कहानी का नया संदर्भ और स्थिति

नामकरण एवं स्वरूप विकास - प्रवृत्तिगत अध्ययन बदला हुआ दृष्टिकोण - आंचलिकता - आधुनिकता - बदलते संबंधों का चित्रण - अकेलेपन के बोध का चित्रण - नये-पुराने मूल्यों की टकराहट - विसंगति बोध - शिल्प - भाषा - सांकेतिकता - प्रतीक - बिम्ब - प्रयोगशीलता ।

अध्याय - दो ... ... 32 - 49

अमरकान्त का रचना-व्यक्तित्व

जीवनवृत्त - आरंभिक रेखाएँ - लेखन की शुरूआत - यथार्थ से साक्षात्कार - प्रगतिशील लेखक संघ से का सहचर्य - साहित्य के क्षेत्र में - कहानियों में प्रतिबिंबित अमरकान्त - अमरकान्त की वैचारिकता - उपन्यासकार अमरकान्त ।

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - तीन ... ... 50 - 74

अमरकान्त की कहानियों का वस्तु पक्ष

करुणा और विडम्बना की कहानियाँ - व्यंग्य के नये आयाम - निम्न-मध्यवर्गीय मानसिकता की कहानियाँ - प्रबल जिजीविषा की कहानियाँ - मध्य वर्गीय तथाकथित सफेदपोश तबके के छद्म की कहानियाँ ।

अध्याय - चार ... ... 75 - 87

अमरकान्त का सामाजिक दर्शन

अध्याय - पाँच ... ... 88 - 111

अमरकान्त की कहानियों की शिल्प संरचना

अमरकान्त का कथा विन्यास - आत्मालाप या आत्मकथ्य की पद्धति - रेखाचित्र और व्यक्ति चित्र की पद्धति - यथार्थवादी शिल्प को अपनाने की पद्धति - पात्र - प्रस्तुति - भाषा - सांकेतिकता प्रतीकात्मकता तथा बिम्बात्मकता ।

उपसंहार ... ... 112 - 117

संदर्भ ग्रन्थ सूची ... ... 118 - 121

अध्याय - एक

नयी कहानी का नया संदर्भ और स्थिति

नयी कहानी स्वातन्त्र्योत्तर काल की कथा प्रवृत्ति है । स्वातन्त्र्योत्तर काल में नयी कहानी विस्तृत चर्चा का विषय बनी । सन् 1940 से 1950 ई॰ तक का काल हिन्दी कथा-साहित्य के लिए संक्रान्ति काल है । इस काल के दौरान ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक घटनाएँ इतनी द्रुतगति से घटित हुई कि इस समय के सभी प्रतिष्ठित कहानीकारों के रचनारत होने के बावजूद कहानी की कोई विशेष दिशा निर्णित नहीं हो पाई । कहानी के रूप में अवश्य ही परिवर्तन होने लगा और वह भीतर बदलने की स्थिति तक आ गई ।

स्वाधीनता-प्राप्ति भारतीय इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना है । इसने अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद को व्यापक जन-आन्दोलन के सम्मुख घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया । यह भारतियों की समग्र

चेतना का केन्द्र-बिन्दु था क्योंकि "देश का सम्पूर्ण गौरव और सांस्कृतिक मर्यादाएँ इस बिन्दु से जुड़ी हुई हैं और यहीं से शुरू होती है आज़ादी के उमंगों में खोई हुई नये भारत की यात्रा ।" भारत का स्वतंत्र होना विश्व-भर में अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद को समाप्त करने में प्रेरणा का स्रोत रहा । परतन्त्र देशों में भी स्वतन्त्रता आन्दोलन तीव्र और व्यापक बनने लगे ।

आज़ादी मिलने के बाद देश ने व्यक्ति और समाज के सर्वतोन्मुखी विकास के लिए दृढ निश्चय किया । इस निश्चय को कार्यरूप देने के लिए उसने कई कार्यक्रम और योजनाएँ निर्धारित कीं । भारत के समक्ष अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सवाल थे । राष्ट्रीय स्तर पर उसे सामाजिक व्यवस्था और अर्थतन्त्र को समृद्ध बनाना था, साथ ही उसे एक वर्ग-हीन, शोषण-मुक्त समाजवादी समाज की स्थापना भी करना था । अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर देश ने अन्य राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने और विश्व-शान्ति में सहयोग देने के लिए विश्व के सैनिक-गुटों से अलग रहने का निश्चय किया । सदियों तक अंग्रेज़ी हुकूमत द्वारा किए गये शोषण ने देश की सामाजिक एवं आर्थिक दशा को नितांत जर्जर बना दिया । इसीलिए भारत का सर्वाङ्गीण विकास करने के लिए सुनियोजित कदम उठाए गये । देश को सभी तरह से विकासपथ की ओर अग्रसर करने केलिए राज्यों का पुर्नगठन, रियायतों का विलय, ज़मींदारी प्रथा की समाप्ति, श्रमिकों की रक्षा के लिए कानून, छुआछूत को अवैधानिक घोषित करके वर्ग-वैषम्य को दूर करना, बडे उद्योगों की स्थापना, आर्थिक संस्थानों का राष्ट्रीय-करण, बालिग मताधिकार, पंच वर्षीय योजनाओं की क्रियान्विति जैसे कदम उठाए गये । स्वतंत्र होने के साथ ही देश में क्रान्तिकारी परिवर्तनों की

---

1. नयी कहानी उपलब्धि और सीमाएँ - लेखक डॉ. गोरधनसिंह शेखावत, पृ.20-21

चेतना का स्फुरण हुआ और देश ने नये जीवन की धारा में कदम रखा ।

किन्तु स्वतंत्रता के उपरान्त देश का विभाजन हो गया जो कि एक महत्वपूर्ण और प्रभावकारी घटना है । भारतवर्ष के दो देशों में विभाजन ने साम्प्रदायिकता का जहर फैला दिया क्योंकि देश का विभाजन साम्प्रदायिक आधार पर हुआ था । हिन्दू तथा मुस्लिम साम्प्रदायिकता के परिणामस्वरूप देश में रक्तपात शुरू हो गया । विभाजन की विभीषिका में पाशविकता और बर्बरता ने ताण्डव किया जिसमें समाज के सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक मूल्य जलकर राख हो गये । सारे आदर्श, विश्वास और राष्ट्रीय आन्दोलन की सारी गरिमा इस आग में झुलस गई और विघटनवादी प्रवृत्तियों का उदय होने लगा : "हमारी चेतना एक स्वर्णिम भविष्यवाद से स्पन्दित हो रही थी कि शरणार्थियों के काफिले आते और जाते दिखाई देने लगे ..... और इस भयंकर रक्तपात के बीच आंतरिक रूप से विघटन समा गया, जो कहीं हमें हमारे दिलों और दिमागों में शरणार्थी बनाता चला गया ।"

स्वातंत्र्योत्तर काल में जहाँ राजनीतिक घटनाएँ बड़ी तीव्र गति से जीवन को झकझोर रही थीं वहीं इस युग की वैचारिक चेतना गाँधीवादी, मानववादी, व्यक्तिवादी तथा समाजवादी विचार-दर्शनों से प्रभावित हुई, साथ ही जहाँ दो विश्वयुद्धों ने यूरोप के सांस्कृतिक जीवन को ध्वस्त कर दिया वहीं भारत को भी अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया । देश में हुए औद्योगिक विकास ने भारतीय समाज में यांत्रिकता का जहर घोल दिया ।

---

1. नयी कहानी की भूमिका - लेखक कमलेश्वर, पृ.10

परिणामस्वरूप औद्योगिक विकास के साथ हमारे तरुण लेखकों में यह पीडाजनक अनुभूति जागी कि मनुष्य मशीन का पुर्जा बन गया है जिसके कारण उसका व्यक्तित्व खंडित और विघटित होता जा रहा है ।

राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर हुए इन द्रुत परिवर्तनों ने भारतीय साहित्य को एक नई दिशा दी तथा स्वातन्त्र्योत्तर काल में हिन्दी कहानी में बोध का एक नया स्वर उभरा । इस नये स्वर के रूपायन में कई साहित्यिक एवं साहित्येतर विचार संपदाओं तथा नई आकांक्षाओं एवं नये जीवनमूल्यों का योगदान रहा है । सबसे बढकर परिवर्तित सामाजिक और राजनीतिक संदर्भों की कथा-साहित्य में नये रूप विधान के संकल्प में शाश्वत भूमिका रही है - "नयी कहानी में आधुनिकता का समावेश नहीं है - वह स्वयं आधुनिकता से जन्मी है । यह पुरानी कहानी का संशोधित रूप नहीं, पुरानी कहानी की विरल नयी उद्भावनाओं की शृंखला में एक विपुल कृतित्व की धारा का उन्मेष और प्रयाण है[1] ।"

अधिकार के हाथ में आते ही भारत का वातावरण एकदम बदल गया । "ज्योंही संघर्ष का युग समाप्त हुआ और सत्ता का युग आया त्योंही यह ऊपरी प्रभामंडल अचानक निस्तेज पडने लगा[2] ।" इसी क्रम में स्वतन्त्रता से हमारा मोहभंग हुआ । मूल्यों के मोहभंग की इस स्थिति में हिन्दी का कहानीकार रचनात्मक स्तर पर बहुत सक्रिय हुआ तथा हिन्दी कहानी का विकास बहुत तीव्र गति से हुआ ।

---

1. नयी कहानी की भूमिका - लेखक कमलेश्वर, पृ.140
2. मानव मूल्य और साहित्य - लेखक धर्मवीर भारती, पृ.87

बदली हुई परिस्थितियों में जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी जैसे कहानीकार समय-बोध को झेलने में असमर्थ रहे इसलिए वे रचनात्मक स्तर पर मौन हो गए जबकि यशपाल, अमृतराय, रांगेय राघव, अमृतलालनागर, नागार्जुन, भगवतशरण उपाध्याय आदि ने रचनात्मक स्तर पर सामाजिक दायित्व-बोध का परिचय तो दिया; किन्तु हिन्दी कहानी के क्षितिज पर गतिशीलता का अभाव ही था । ऐसे समय हिन्दी कहानी के क्षेत्र में एक नितांत नयी पीढी का आर्विभाव हुआ जिसने कहानी लिखना ही स्वातन्त्र्योत्तर काल में आरभ किया । ये नये कहानीकार परिवर्तित परिवेश को अपनी दृष्टि से देखे नये ढंग से उसे अभिव्यक्त करने लगे क्योंकि उन्हें "जैनेन्द्र का दार्शनिक एप्रोच, अज्ञेय का प्रयोग, यशपाल की प्रगतिशीलता और जोशी का आत्म-मंथन सब कुछ बेकार-बेईमानी लगा ।"[1] इसलिए इस पीढी के कहानीकारों ने जो कहानियाँ लिखीं, वे पूर्ववर्ती पीढी के कहानीकारों की कहानियों से सर्वथा भिन्न और ताजा थीं । कथ्य और अभिव्यक्ति दोनों ही दृष्टियों से ये कहानियाँ पूर्ववर्ती कहानियों से भिन्न ही नहीं, आगे की कहानियाँ थीं । इस काल में जो कहानियाँ लिखी गई, उन्हें "नयी कहानी" के नाम से अभिहित किया गया और बाद में यही एक आन्दोलन में परिणत हो गया । फणीश्वरनाथ "रेणु", मार्कण्डेय जैसे लेखक रचनात्मक स्तर पर अपने "नयेपन" का परिचय दे चुके थे - "मार्कण्डेय की "सात बच्चों की मां" और फणीश्वरनाथ "रेणु" की "रसप्रिया" जैसी कहानियाँ तब तक छप चुकी थीं और उन्हें हिन्दी कहानी के विच्छेदक बिन्दु के रूप में स्वीकार भी कर लिया गया था ।"[2] 1954 में कहानी पत्रिका का पुन:प्रकाशन हुआ - "कहानी पत्रिका सन् 1938 में निकलकर कुछ दिनों बाद ही लडाई के कारण बंद हो गई , उसे फिर निकालने का

---

1. समकालीन कहानी समांतर कहानी - डॉ. विनय, पृ.7
2. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - डॉ. नरेन्द्र मोहन, पृ.35

हौसला सरस्वती प्रेस को 1954 में हुआ[1]।" इस पत्रिका ने कहानी के नयेपन को रेखांकित किया और कहानी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। "सरस्वती प्रेस की "कहानी" हिन्दी में इस दशक की पहली साहित्यिक पत्रिका ही नहीं, बल्कि एक तरह से इस पूरे कहानी-दशक की शुरुआत है[2]।" यहीं से "नयी कहानी" की विकास-यात्रा प्रारंभ होती है।

नामकरण एवं स्वरूप-विकास

स्वातंत्र्योत्तर कहानी को "नयी कहानी" के नाम से पुकारा गया क्योंकि इसमें नयापन था और इस नयेपन ने ही उसे पूर्ववर्ती कहानी से अलग किया। "नयी कहानी" शब्द का प्रयोग जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, अश्क, यशपाल के बाद आनेवाली पीढी की रचनाओं के लिए किया जाता है। इस पीढी ने लिखना स्वातंत्र्योत्तर काल में शुरू किया। "नयी कहानी" के नामकरण से पहले "नयी कविता" नाम प्रकाश में आ चुका था। दुष्यंतकुमार ने सबसे पहले "नयी कहानी : परम्परा और शीर्षक[3]" नामक निबंध में नयी पीढी की कहानियों में नयापन और मौलिकता देखकर उनपर विचार किया था। उन्हें मार्कण्डेय, अमरकान्त, राजेन्द्र यादव, विद्यासागर नौटियाल, कमल जोशी, धर्मवीर भारती की कहानियों में नयेपन और प्रगति के कुछ चिह्न नजर आये थे। लेकिन दुष्यंतकुमार ने अपने लेख के नामकरण की सार्थकता के विषय में किसी प्रकार का तर्कसंगत विवेचन नहीं किया।

---

1. कहानी नयी कहानी - डॉ. नामवरसिंह, पृ.214
2. वही, पृ.214
3. कल्पना - जनवरी, 1956

"नयी कहानी" के नामकरण का प्रश्न और उसकी आवश्यकता पर डॉ॰ नामवरसिंह ने अपनी पुस्तक "कहानी : नई कहानी" में विचार किया और पूरे बल के साथ "नयी कहानी" नाम का समर्थन किया । उन्होंने "नयी कविता" के संदर्भ में "नयी कहानी" के नामकरण का प्रश्न उठाते हुए लिखा, "मेरे मन में यह सवाल उठता है कि "नयी कविता" की तरह "नयी कहानी" नाम भी कोई चीज़ है क्या ?"[1] इसके आगे उन्होंने लिखा कि "नयी कहानी" नाम से कोई आंदोलन अब तक नहीं चला है । इससे क्या समझा जाय ? यह कि कहानी में कुछ नयापन आया नहीं, कि कहानी में जो नयापन आया है, वह कविता की अपेक्षा बहुत कम है ?"[2]

डॉ॰ नामवरसिंह ने अपनी इस पुस्तक में नामकरण का प्रश्न उठाते हुए कहानी के परिवर्तित रूप की चर्चा की और "नयी कहानी" में कथा का ह्रास, शिल्प के नये प्रयोग, मंजी हुई भाषा आदि उन्हे दिखाई दिए । पर, नयी कहानी" के विषय में नामवरसिंह के विचार समय-समय पर विकसित होते रहे हैं । वे कभी सांकेतिकता को,[3] या कभी सूक्ष्म वातावरण को[4] या संगीतात्मकता को[5] या कथा-विन्यास को[6] या वास्तव के विविध आयामों को[7] या नवीन दृष्टि को[8] नयी कहानी का आधार मानकर उसका मूल्यांकन करते हैं । वैसे, कुल मिलाकर नामकरण की आवश्यकता को उन्होंने महसूस किया और "नयी कहानी" नाम के समर्थकों में वे भी एक रहे हैं ।

---

1. कहानी - नई कहानी - डॉ॰ नामवरसिंह, पृ॰19
2. वही, पृ॰19
3. कहानी - नई कहानी - डॉ॰ नामवरसिंह, पृ॰42
4. वही, पृ॰42
5. वही, पृ॰43
6. वही, पृ॰44
7. वही, पृ॰58
8. वही, पृ॰58

"नयी कहानी" के नामकरण के साथ यह प्रश्न भी विचारणीय है कि क्या उसका नामकरण "नयी कविता" के अनुकरण पर किया गया ? राजेन्द्र यादव इस बात को नहीं मानते कि "नयी कविता" "नयी कहानी" से पहले एक विशिष्ट प्रवृत्ति के रूप में स्थापित हो चुकी थी[1]। उनके अनुसार छायावादी युग से ही कविता को नयी तरह की कविता कहा जाता रहा है। मोहन राकेश "नयी कहानी" आन्दोलन का प्रारंभ 1950 से मानकर उसे "नयी कविता" के आन्दोलन से पृथक रखने के पक्ष में हैं - "नयी कहानी" के आन्दोलन की शुरुआत सन् पचास के लगभग हुई - "नयी कहानी" यह नाम तो उसे सन् पचपन - छप्पन के बाद दिया जाने लगा। जिन अनिवार्य परिस्थितियों ने इस आंदोलन को जन्म दिया, उनका "नई कविता" के साथ कोई संबंध नहीं था[2]।" आगे वे यों लिखते हैं - "नयी कविता" आंदोलन तब तक अपनी चरम सीमा तक पहुँचकर निश्चित रूप और अर्थ ग्रहण कर चुका था[3]।" पर मोहन राकेश का यह कथन राजेन्द्र यादव के विचारों से मेल नहीं खाता। दूसरी ओर कमलेश्वर "नयी कहानी" आंदोलन को "नयी कविता" के समानांतर मानते हुए लिखते हैं - "इसी समय कविता का आंदोलन आता है - उसकी चेतना के अवरुद्ध स्रोतों को खोलने के प्रति और लगभग उसी के आसपास "नयी कहानी" एक गतिवान प्रक्रिया को जन्म देती है और जीवन को झेलने वाले केन्द्रीय पात्रों की ओर अभिमुख होती है[4]।"

ये तीनों ही कथाकार "नयी कहानी" को "नयी कविता" के प्रभाव से मुक्त मानते हुए उसे एक स्वतंत्र और स्थापित आन्दोलन के रूप में स्वीकार करते हैं। यह तो महज़ संयोग ही है कि "नयी कविता" नाम भी 1953 में "नये पत्ते" में प्रकाशित रेडियो परिसंवाद में अज्ञेय द्वारा दिया गया।

---

1. कहानी - स्वरूप और संवेदना - राजेन्द्र यादव, पृ.42
2. बकलम खुद - मोहन राकेश, पृ.99
3. वही, पृ.99
4. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर, पृ.16

यह तो निश्चित ही है कि नयी कविता का नामकरण नयी कहानी मे पूर्व ही हो चुका था, अत: नयी कहानी का नामकरण नयी कविता के अनुकरण पर हुआ तो कोई आश्चर्य नहीं । इस अनुकरण मे "नयी कहानी" की महत्ता कम नहीं हो जाती । मुख्य सवाल तो नवीन अवबोध का है जो नयी कहानी के क्षेत्र में निश्चित रूप मे दृष्टिगत है तथा जिसे डॉ॰ नामवरसिंह ने भी स्वीकार किया । इतना ही नहीं, जब "नयी कहानी" एक रचनात्मक विधा के रूप में स्थापित हुई, तब धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय, नरेश मेहता, कुँवरनारायण, श्रीकांत वर्मा, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना जैसे प्रतिष्ठित कवि नयी कहानी-लेखन की ओर उन्मुख हुए । इससे "नयी कहानी" की शक्ति का प्रमाण मिलता है ।

"नयी कहानी" के नामकरण को लेकर जितना विवाद हुआ, उतनी ही व्यापक चर्चा इसकी परिभाषा को लेकर हुई । मोहन राकेश के अनुसार, "माध्यम के रूप में कहानी की ओर नयी पीढी का विशेष झुकाव एक आंतरिक अनिवार्यता के कारण ही है । जो लोग कहानी को बंधी-बंधायी परिभाषा की रचना शैली के रूप में देखते हैं, उन्हें इस स्थिति को समझने में कठिनाई हो सकती है, क्योंकि इस अर्थ में नये लोगों ने इस माध्यम को नहीं चुना ।"[1] वे नयी-नयी संभावनाओं को ही "नयी कहानी" मानते हुए लिखते हैं - "हर नयी कहानी अपने में एक नया प्रयोग, एक नया सीमा चिह्न हो सकती है । जो सामान्य धरातल उसे पुरानी कहानी से अलग करता है वह नयी-नयी संभावनाओं की खोज का है । हिन्दी में यदि इस अन्वेषणात्मक कहानी को नयी कहानी नाम दिया गया है तो इस अर्थ में ही कि उसके प्रयोग तथा अन्वेषण का क्षेत्र अपना है और कि अलग-अलग कहानीकारों के विशिष्ट व्यक्तित्व और विशिष्ट अन्वेषण क्षेत्र के

---

1. बकलम खुद - मोहन राकेश, पृ॰102

रहते हुए भी इस माध्यम में एक नयी सार्थकता ले आने का उनका प्रयत्न एक-सा है[1]।" नयी कहानी की रूढ परिभाषा देना कठिन मानते हुए भी उनका विचार है कि "जिन्दगी की आंतरिक और बाह्य परिस्थितियों के चित्रण के लिए यह माध्यम अधिक अनुकूल है - अनुकूल, किन्तु आसान नहीं[2]।" मोहन राकेश नयी कहानी को परम्परा से मुक्त मानते हैं और यह उनकी दृष्टि की नवीनता है ।

राजेन्द्र यादव भी मोहन राकेश के समान ही नयी कहानी को परम्परा से मुक्त मानते हैं । उनके अनुसार, "इन दस वर्षों में कहानी का ऐसा व्यक्तित्व जरूर संवरा और निखरा है जो उसकी पिछली परम्परा से एकदम भिन्न है[3]।" साथ ही वे यह भी मानते हैं कि "विधा परंपरा की दृष्टि से सन् 1940 से 1950 का पिछला दशक आज की कहानी को कुछ नहीं दे पाया[4]।" यद्यपि वे नयी कहानी को प्रेमचन्द से जोडने का प्रयत्न करते हैं, "अगर प्रेमचंद या अन्य कहानीकारों में कहीं कुछ ऐसा मिलता है जो आज की कहानी के बहुत अधिक निकट है, तो उसे अनुकरण ही क्यों माना जाए ? क्यों न माना जाये कि आज की कहानी ने अपना प्रारंभ वहीं से किया है[4] ?" नयी कहानी में "व्यक्तिगत सामाजिकता" पर उनके विचार हैंकि "आज का कहानीकार मानता हैकि युग के सारे विराट को, गतिशील मूल्यों के संस्कारों और संक्रमण को कहानी के माध्यम से हम व्यक्ति या व्यक्ति-समूह की चेतना-धारा में कभी-कभी चेतना के अनेक स्तरों पर एकसाथ पकडने की कोशिश करते हैं । काल के प्रवाह में व्यक्ति की सामाजिकता का बोध और स्थिति ही आज की कहानी की विषयवस्तु है[5]।"

---

1. बकलम खुद - मोहन राकेश, पृ.102
2. वही, पृ.105
3. कहानी : स्वरूप और संवेदना-राजेन्द्रयादव, पृ.77
4. वही, पृ.77
5. वही, पृ.80

राजेन्द्र यादव का तात्पर्य यही है कि नयी कहानी व्यक्ति को उसके सामाजिक परिवेश, मानसिक अर्न्तद्वन्दों तथा व्यवहारिक जीवन की आवश्यकता के साथ उसे समग्र रूप से चित्रित करती है ।

कमलेश्वर नयी कहानी के स्वरूप को हमेशा के लिए परिवर्तनशील मानते हैं और उसे हमेशा प्रवाहमान मानते हुए कहते हैं:- "सर्जनात्मक साहित्य में जो कुछ व्यर्थ है, उसे छाँटते जाने की दृष्टि ही नयी कहानी की वास्तविक प्रक्रिया है, इसलिए नया शब्द न विशेषण है, न संज्ञा वह मात्र उस प्रक्रिया का द्योतक है जो सतत् प्रवाहमान है[1]।" साथ ही, कमलेश्वर नयी कहानी को उसकी पूर्व वर्ती परम्परा से भिन्न मानते हुए भी उसे भारतेन्दु प्रेमचन्द, प्रसाद तथा यशपाल से जोडते हैं - "मेरी दृष्टि में नयी कहानी की सबसे बडी उपलब्धि यह है कि उसने जैनेन्द्र और अज्ञेय की नितांत व्यक्तिवादी, अहंवादी और रुग्ण मानसिकता से हिन्दी कहानी को मुक्त किया है । नयी कहानी ने फिर भारतेन्दु, प्रेमचंद, प्रसाद और यशपाल की प्रगतिशील जीवन-दृष्टि को अपनाते हुए कहानी को बहुत विविधता प्रदान की है[2]।" अपनी दृष्टि को और भी स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है "यथार्थ को खोजनेवाली कहानी नयी है[3]।" इस प्रकार कमलेश्वर नवीनता को सर्जन की प्राथमिक आवश्यकता मानते हैं और नयी कहानी को उसकी समग्रता में ईमानदार लेखन मानते हैं ।

इन उपर्युक्त मान्यताओं के अलावा नयी कहानी के बारे में यह मान्यता भी प्रचलित है कि वह पूर्व वर्ती कहानी की ही विकसित परंपरा है -

---

1. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर, पृ.49
2. मोहन राकेश - साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि - सं.अनीता राकेश कमलेश्वर के विचार, पृ.78
3. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर, पृ.73

"प्रेमचंद, यशपाल और जैनेन्द्र और अज्ञेय की परम्परा का एक मिक्सचर ही थी नयी कहानी ।"[1] प्रेमचन्द ने यदि विरासत के रूप में हिन्दी की परवर्ती कहानी को स्वस्थ यथार्थवादी दृष्टि दी तो अज्ञेय, जैनेन्द्र कुमार, जोशी जैसे कहानीकारों ने उसे शिल्पगत नवीनता प्रदान की । प्रेमचन्द की "पूस की रात", "कफन", तथा "शतरंज के खिलाडी" जैसी कहानियों में यथार्थ का क्रूर और भयावह रूप हमारे सामने आता है । "पूस की रात" तथा "कफन" में पात्रों की निस्संगता उस यथार्थ स्थिति की ओर इंगित करती है जो आर्थिक अभाव के कारण जन्मी है । उनकी इन कहानियों का अंत खुला छोड दिया गया है जो कहानीकार की तटस्थता का परिचायक है । कहानीकार ने सम्भवत: इन कहानियों का अंत इसलिए खुला छोडा है क्योंकि आज मानव की नियति अनिश्चित और अज्ञात है । मानव की इसी अनिश्चित और अज्ञात नियति का उद्‌घाटन नयी कहानी में बार-बार हुआ है । अज्ञेय की "रोज" जैसी कहानियां "सांकेतिकता" का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है यही "सांकेतिकता" बाद में "नयी कहानी" की शिल्पगत वैशिष्ट्य का कारण बनी है । यशपाल ने अपनी कहानियों में प्रगतिशील जीवन-दृष्टि को अपनाते हुए परवर्ती कहानी केलिए स्वस्थ सामाजिक पीठिका निर्मित की । इलाचन्द्र जोशी तथा जैनेन्द्र कुमार ने मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्तों के तहत पात्रों का चित्रण कर नयी कहानी को पात्रों की बारीकियों तक पहुंचने का सशक्त अस्त्र प्रदान किया । दूसरे शब्दों में कहा जाय तो यशपाल ने नयी कहानी को मार्क्सवादी दृष्टिकोण तथा जोशी एवं जैनेन्द्र कुमार ने मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान किया, यद्यपि, नयी कहानी में ज़ोर इनके सैद्धान्तिक पक्ष पर न होकर व्यवहारिक पक्ष पर है । अत: कहा जा सकता है कि नयी कहानी ने परम्परा को

---

1. स्थितियां रेखांकित - सं. गोविन्द मिश्र, पृ.18

पूर्णत: नकारा नहीं है । उसने परम्परा के गतिशील तत्वों को अपनाया है - "नयी कहानी उतनी परम्परा-विच्छिन्न नहीं हैजितने कुछ नये कहानीकार अपने जोश में सिद्ध करना चाहते हैं; और परम्परा के इस दान को स्वीकार किये बिना उन आयामों की सही रूपरेखा नहीं स्थापित हो सकती जो नये कहानीकार ने आधुनिक संदर्भ में, आज की परिस्थितियों में परिचित प्रवृत्तियों को गहनतर, सघनतर और सूक्ष्मतर अर्थवा व्यापकता बनाकर प्रस्तुत किये हैं[1]।"

नयी कहानी के नाम तथा स्वरूप को लेकर 1955-65 के बीच काफी वाद-विवाद हुआ । नयी कहानी पर अनेक आरोप लगाये गये जिनके उत्तर मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव तथा कमलेश्वर ने दिये तथा धीरे-धीरे नयी-कहानी आन्दोलन इस त्रयी तक सिमट गया ।

"कहानी", "कल्पना", "संकेत", "निकष", "हंस", "नयी कहानियां", "लहर", "ज्ञानोदय", "सारिका" जैसी पत्रिकाओं ने नयी कहानी के प्रचार-प्रसार में काफी योगदान दिया । कहानी के नववर्षांक, 1956 में डॉ॰ नामवरसिंह ने अपने लेख "आज की हिन्दी कहानी" में "नयी कहानी" का प्रश्न उठाया और यहीं से उसकी चर्चा आरंभ हुई । 1958-59 में जहाँ एक ओर अच्छी तथा प्रसिद्ध कहानियां छपीं, वहीं नयी कहानी संबंधी चर्चा ने ज़ोर पकडा । डॉ॰ नामवरसिंह ने "नयी कहानी : सफलता - सार्थकता" शीर्षक लेख लिखा । 1959 से "कहानी" में "आज की हिन्दी कहानी" शीर्षक से एक स्तम्भ प्रारंभ हुआ जिसमें मार्कण्डेय, अश्क, शिवप्रसादसिंह,

---

1. नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति - सं॰ देवीशंकर अवस्थी : नेमीचन्द्र जैन का लेख, पृ॰ 119

लक्ष्मीनारायण लाल, नामवरसिंह, हृषिकेश, प्रकाशचन्द्रगुप्त ने नयी कहानी की उपलब्धियों की चर्चा की ।

1960 का वर्ष हिन्दी कहानी के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी वर्ष भैरवप्रसादगुप्त के संपादन में "नयी कहानियाँ" तथा चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के संपादन में "सारिका" का प्रकाशन आरम्भ हुआ । "नयी कहानियाँ" पत्रिका में "हाशिये पर" स्तम्भ में डॉ॰ नामवरसिंह नयी कहानी के नयेपन को विश्लेषित करते थे । आंचलिकता को लेकर "सारिका" में एक परिचर्चा भी आयोजित हुई । इन पत्रिकाओं में अच्छी कहानियों के साथ कहानी संबंधी चर्चा भी खूब छपती थी ।

नयी कहानी : प्रवृत्तिगत अध्ययन

"नयी कहानी" एक अत्यंत संभावनापूर्ण आंदोलन है । इस आंदोलन ने हिन्दी कहानी को कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से समृद्ध किया । नयी कहानी के संदर्भ में "परिवेश मे प्रतिबद्धता", "अनुभूति की "प्रामाणिकता", "अनुभव की ईमानदारी", "भोगा हुआ यथार्थ" जैसे अनेक साहित्यिक मुद्दे आलोचना के क्षेत्र में प्रचलित हुए । वास्तव में नयी कहानी ने अपने-आपको पुरानी कहानी मे अनेक बिन्दुओं पर अलग किया । इसी अलगाव में नयी कहानी की विभिन्न प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है ।

नये कहानीकार के लिए कृत्रिम रचना का कोई अर्थ नहीं है । वह कहानी रचने केलिए अपने अनुभव की संश्लिष्टता को आधार बनाता है । इसीलिए नयी कहानी अधिक प्रामाणिक लगती है । नयी कहानी का लेखक

सिर्फ उन्हीं अनुभव-खंडों का चित्रण करता है जो वास्तविक जीवन में उसने अनुभव किये हैं । अत: नयी कहानी पूरी तरह जीवन के प्रति प्रतिबद्ध है - "नयी कहानी की आंतरिक माँग यही थी कि उसकी यात्रा जीवन से साहित्य की ओर हो । जो कुछ जीवन में है ..... उसकी आंतरिक शक्ति के रूप में उसे अभिव्यक्त किया जाये और भविष्य से उसे सम्पृक्त रखा जाये[1]।" इससे स्पष्ट होता है कि नयी कहानी का रचनाकार आज के यथार्थ का भोक्ता है । भूत और भविष्य के बजाय उसके लिए वर्तमान ही मुख्य है - "उसने द्रष्टा और भविष्यवक्ता की खोल को उतार फेंका है[2]।"

बदला हुआ दृष्टिकोण

"नयी कहानी" में कहानीकार का दृष्टिकोण भिन्न और बदला हुआ है । कहानी में वह खुद्दज़िन्दगी का भोक्ता है । वह कोई उपदेशक या शाश्वत मूल्यों का स्रष्टा नहीं है । कहानीकार का दृष्टिकोण यथार्थ के प्रति बदला हुआ है । कहानीकार क्रूर यथार्थ को बडी निर्मम तटस्थता से प्रस्तुत करता है वह स्थितियों या पात्रों के प्रति भावुक रुख नहीं अपनाता और न ही आदर्शवादी दृष्टिकोण अपनाता है क्योंकि - "यहाँ तक आते-आते कथाकार ने लिजलिजी भावुकता को तिलांजली दे दी और उसका दृष्टिकोण जीवन को आदर्श में लिपटी अश्रु विगलित भावुकता के साथ देखने का नहीं रह गया था । वह जीवन को यथार्थ रूप में देखने का प्रयास कर रहा था[3]।"

---

1. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर, पृ.35
2. वही, पृ.16
3. परिवेश की चुनौतियाँ और साहित्य - हेतु भारद्वाज, पृ.68-69

कमलेश्वर की कहानी "नीली झील" में यथार्थ के प्रति लेखक का बदला हुआ दृष्टिकोण देखा जा सकता है । कहानी का नायक महेश पांडे अपनी अनाम-भूख लेकर जीता है जिसकी रक्षा के लिए वह लोगों को धोखा तक देता है, उनके रुपये हजम कर जाता है । किन्तु महेश पांडे किसी आदर्श को ओढ़कर पाठक के सामने नहीं आता इसीलिए वह पात्र अधिक विश्वासनीय और प्रामाणिक लगता है । इसी तरह की यथार्थ प्रेरित दृष्टि का परिचय हमें "नयी कहानी" दौर के अन्य कहानीकारों, राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, मन्नू भंडारी, भीष्म साहनी, ज्ञानरंजन आदि में मिलता है ।

आंचलिकता

कथ्य के स्तर पर नयी कहानी का फलक अत्यंत वैविध्यपूर्ण है । आंचलिकता को भी नये कहानीकारों ने अपनी कहानियों में प्रश्रय दिया। "नयी कहानी का आरंभ आंचलिक कथाओं से हुआ ।" बाद में नयी कहानी के अंतर्गत लिखी जानेवाली आंचलिक कहानियों में वैविध्य आता गया क्योंकि परिवेश और स्थितियों के बदलने के साथ-साथ कहानीकार भी बदली हुई स्थितियों और परिवेशों का चित्रण करने लगे ।

शिवप्रसाद सिंह की "दादी मां", मार्कण्डेय की "भूदान" और फणीश्वरनाथ "रेणु" की "तीसरी कसम" तथा "रसप्रिया" जैसी श्रेष्ठ आंचलिक कहानियों में संवेदना के बदले तेवर देखे जा सकते हैं । ग्राम्य जीवन के सामाजिक और सांस्कृतिक पहेलुओं का सटीक चित्रण तथा संवेदनाओं के बदलते रूप इन कहानियों में देखे जा सकते हैं । फणीश्वरनाथ "रेणु" की कहानी

---

1. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - डा॰ नरेन्द्र मोहन, पृ॰33

"तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम" में ग्राम जीवन का जैसा जीवंत, सहज और सजीव चित्रण किया गया है वह ग्राम जीवन की करुणा को उभार कर रख देता है । मार्कण्डेय की "भूदान" कहानी गाँवों के नये विकास के स्वप्नभंग की कहानी है जिसमें ग्राम का पुराना शोषक वर्ग अपने-अपने संकुचित स्वार्थों के कारण आज भी किसानों के अभावग्रस्त जीवन और उनके ट्रेजडी का उत्तरदायी है ।

आधुनिकता

नयी कहानी की विशिष्टता उसमें पाई जानेवाली आधुनिकता है । "नयी कहानी में आधुनिकता का प्रश्न भी उठाया गया तथा नयी कहानी ने आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में मूल्यगत संक्रमण को यथार्थता के साथ अभिव्यक्ति दी ।[1] " नई कहानी में आधुनिकता के कई आयाम देखे जा सकते हैं । डॉ॰ इन्द्र नाथ मदान के अनुसार, "आधुनिकता का बोध मानव की अनिश्चित और अज्ञात नियति में उजागर होता है ।[2]" डॉ॰ मदान द्वारा व्याख्यायित यह आधुनिक भावबोध कई नये कहानीकारों जैसे निर्मल वर्मा, रामकुमार इत्यादि की कहानियों में पाया जाता है ।

निर्मल वर्मा ने भारतीय तथा विदेशी परिवेश से संबंधित कहानियाँ लिखी । उनकी कहानी "लंदन की एक रात" आधुनिक भावबोध को उजागर करती है । इस कहानी के आरंभ में ही अज्ञात नियति के प्रति एक अजीब से भय की ओर संकेत किया गया है । यह भय काल्पनिक नहीं वरन् वास्तविक जीवन संदर्भों से जुड़ा हुआ है जो कहानी में धीरे-धीरे फैलता गया है

---

1. नयी कहानी उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ॰ गोरधन सिंह शेखावत, पृ॰242
2. आधुनिकता और हिन्दी साहित्य - इन्द्रनाथ मदान, पृ॰82

और मूर्त रूप ग्रहण कर गया है । "मैं", "विली", निग्रो छात्र "जार्ज" रंगभेद के आधार पर हुए दंगे-फसादों को कई स्थानों पर महसूस कर चुके हैं अत: वे भयभीत नज़र आते हैं । यह भय वहाँ की पूरी जीवन पद्धति और व्यवस्था से उत्पन्न भय है, उन्हें लगता है जैसे "किसी ने हमारे इर्द-गिर्द एक भयावह-सा फंदा डाल दिया, जिसे छूते ही रक्त बहने लगता था ।"

"रामकुमार की कहानी "सेलर" में खालीपन और उदासीनता का बोध है जो आधुनिक भावबोध से जुड़ा हुआ है । इस कहानी की शुरुआत चित्र के अंकन से होती है - "खुली-खुली शून्य सी आंखें, जैसे दो दरवाज़े अपने-आप खुल गये हों, जिनके बीच से दूर-दूर तक फैला उजाड दिखाई देता है[2]।" इन वाक्यों में भी मानव की अनिश्चित और अज्ञात नियति की ओर इशारा है जो आधुनिकता का परिचायक है - "यह आधुनिकता के उस दौर को सूचित करता है जिसे नयी कहानी से जोडा जा सकता है[3]।" इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नयी कहानी में आधुनिकता की अभिव्यक्ति कई स्तरों पर हुई है ।

बदलते संबंधों का चित्रण

कथ्य के स्तर पर नयी कहानी में पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर आये संबंधों के बदलाव का चित्रण हुआ है । संबंधों का यह बदलाव

---

1. मेरी प्रिय कहानियाँ - निर्मल वर्मा, पृ.126
2. एक दुनियाँ समानांतर- संपादक राजेन्द्र यादव में संकलित रामकुमार की कहानी "सेलर", पृ.325
3. आधुनिकता और हिन्दी साहित्य - इन्द्रनाथ मदान, पृ.84

परिवार में माँ-बाप और संतान, भाई-भाई, पति-पत्नी, भाई-बहन आदि अनेक स्तरों पर देखा जा सकता है । नयी कहानी में वैसे तो संबंधों के बदलाव को समग्रता से देखा गया है पर बदलते हुए इन मानव संबंधों को शहरी जीवन संदर्भों और स्थिति के परिप्रेक्ष्य में चित्रित करने की प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है । "शहरी जीवन संदर्भों के प्रति ये कहानीकार कुछ अधिक आकर्षित, प्रभावित और कहीं-कहीं आक्रान्त दिखते हैं ।[1]" नयी परिस्थितियों के कारण संबंधों में जो पटिलता और बदलाव आया था उसके प्रति इन कहानीकारों की दृष्टि द्वन्द्वपरक तथा रोमानी ही रही । भीष्म साहनी की "चीफ की दावत", मन्नू भंडारी की "यही सच है", राजेन्द्र यादव की "भविष्य के आसपास मंडराता अतीत" में संबंधों के बदलाव का चित्रण रोमानी धरातल पर ही हुआ नज़र आता है । "चीफ की दावत" में माँ के प्रति पुत्र के व्यवहार का संवेदनात्मक और व्यंग्यात्मक चित्र खींचा गया है पर कहानी की व्यंजना में "माँ" महत्वपूर्ण हो उठी है । "यही सच है" कहानी स्त्री-पुरुष संबंधों के एक बिल्कुल भिन्न रूप को सामने लाती है । इसमें प्रेम की शाश्वत और सनातन धारणा को नकारा गया है तथा प्रेम की व्याख्या परिस्थिति और परिवेश सापेक्ष है । परिवेश और परिस्थिति के बदलते ही निशीथ के प्रति उसकी क्षणिक प्रेम-भाव में बदलने लगती है और संजय के प्रति उसका प्रेम कृतज्ञता तक सीमित होकर रह जाता है । "भविष्य के आसपास मंडराता अतीत" में पति-पत्नी के संबंध विघटन तथा संबंध विच्छेद के उपरांत बच्चों के प्रति स्नेह से उद्वेलित पिता के हृदय का कारुणिक चित्रण किया गया है ।

---

1. आधुनिक के संदर्भ में हिन्दी कहानी - डॉ. नरेन्द्र मोहन, पृ.34

इस तरह यह कहा जा सकता है कि नयी कहानी में संबंध-बदलाव का चित्रण अनेक धरातलों पर हुआ है ।

अकेलेपन के बोध का चित्रण

नयी कहानी में "अकेलेपन" पर कई दृष्टियों से विचार हुआ है । नई कहानी की कथ्यगत स्थिति तथा पात्रगत अवधारणा में जीवन की एक नवीन स्थिति का बारीकी के साथ रेखांकन हुआ है । ऐसे संदर्भों से युक्त कहानियों में या तो पात्र अकेले होते हैं या कथा-स्थितियाँ अकेलेपन के बोध से ग्रस्त दीखती हैं, तदर्थ अजनबी होने ही अनिवार्यता का एहसास भी होता चलता है । यहाँ एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या यह पश्चिमी अस्तित्ववादी दर्शन के प्रभाव स्वरूप ग्रहित अवस्था है ? आत्मनिर्वासन की अनिवार्यता का संकेत अस्तित्ववादी दर्शन में अवश्य मिलता है । लेकिन जीवन की इस अवस्था का संदर्भ इस दार्शनिक रूपायन से संगठित मात्र नहीं है । अत: हिन्दी कहानी की इस अवस्था का परिपार्श्व कई आयामों वाला है जो भिन्न-भिन्न रचनाओं में भिन्न भिन्न स्थितियों के साथ संदर्भित है ।

मन्नू भंडारी की कहानी "अकेली" में चित्रित सोमा बुआ का अकेलापन बुढापे में अकेले अपने पति के साथ जीते हुए वैचारिक एकता के अभाव में उत्पन्न होता है । लेकिन, सोमा बुआ का अकेलापन उसके अपने समाज की सीमा को पार नहीं करता जबकि निर्मल वर्मा की कहानी "सितम्बर की एक शाम" के युवक का अकेलापन उसकी अपनी स्थिति में रहनेवाले किसी भी व्यक्ति का अकेलापन हो सकता है । जब इस कहानी का नायक घास पर लेटे हुए यह सोचता है कि "सारी दुनिया उसकी प्रतीक्षा कर रही है कि

वह उसे अर्थ दे[1]।" तो उसमे "साधारण बेकारी मे कहीं बडा अर्थ ध्वनित होता है[2]।" उषा प्रियंवदा की कहानी "वापसी" का गजाधरबाबू अपने अकेलेपन को तोडने के लिए परिवार में लौट आना चाहता है पर वह रह नहीं पाता। बडी इच्छा लेकर वह परिवार में वापस आता है किन्तु फिर उसे वापस जाना पडता है। नौकरी तो उसके लिए सिर्फ बहाना है क्योंकि जिस अकेलेपन से वह मुक्त होना चाहता है उस अकेलेपन में वापस आने के लिए वह लाचार होता है। रामकुमार की कहानी "समुद्र" में ऐसे व्यक्ति का चित्रण है जो अपनी अकेले और ऊबे होने की बदली हुई मन: स्थिति में समुद्र तट बेमौसम पिकनिक में जाता है। इस कहानी में अकेलेपन का बोध पत्नी को आक्रान्त किये रहता है - "शहर के किसी कमरे में अकेला व्यक्ति जो महसूस करता है, वही उबडापन उसके भीतर भी छाया हुआ है[3]।"

नये-पुराने मूल्यों की टकराहट

नयी कहानी में मुख्य रूप से नये-पुराने मूल्यों की टकराहट को देखा जा सकता है। नये कहानीकारों ने अपनी रचनाओं में मूल्यगत अवधारणा जो परम्परावादी रही है, को कई बार चुनौती दी है पर ज्यादातर कहानीकारों ने परम्परागत मूल्यों के प्रति आकर्षण दिखाया है। इसीलिए नये कहानीकार कहीं भी स्पष्ट रूप से पुराने मूल्यों को नकारते नहीं हैं, फलत: मूल्यगत टकराहट के प्रति इनकी दृष्टि संवेदनात्मक किस्म की रही है - "नयी कहानी में नये - पुराने मूल्यों के द्वन्द्व की प्रकृति संवेदनात्मक है[4]।"

---

1. परिन्दे कहानी संग्रह - निर्मल वर्मा, पृ.124
2. कहानी - नई कहानी - नामवर सिंह, पृ.68
3. रामकुमार - मेरी प्रिय कहानियाँ, पृ.27
4. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - नरेन्द्र मोहन, पृ.35

कृष्ण बलदेव वैद की कहानियों में जो मूल्यगत टकराहट देखने को मिलती है वह अपनी प्रकृति में काफी जटिल है । लेखक ने "मेरा दुश्मन" जैसी अपनी अनेक कहानियों में मूल्यगत टकराहट को संवेदनात्मक धरातल पर व्यक्त किया है । मोहन राकेश की कहानियाँ भी पुराने मूल्यों से बने ढाँचे को पूर्णत: नकारती हुई नज़र नहीं आती क्योंकि मूल्यगत संक्रमण के प्रति उनका रवैया भी संवेदनात्मक ही रहा है, "आर्द्रा" जैसी अनेक कहानियों में । धर्मवीर भारती की "गुल्की बन्नो" राजेन्द्र यादव की "छोटे-छोटे ताजमहल" जैसी कहानियाँ भी इसी बात को सामने लाती है कि नये कहानीकारों में से अधिकांश ने यद्यपि मूल्यगत संक्रमण को चित्रित किया है तथापि परम्परावादी मूल्यों की वे स्पष्टत: नकार नहीं सके हैं ।

विसंगति बोध

नयी कहानी मोहभंग की स्थिति से जुड़ी कहानी है इसीलिए उसमें विसंगति बोध बार-बार उजागर होकर सामने आता है - "नयी कहानी की एक ऐसी अन्तर्धारा भी है, जो मानवीय करुणा के भावों और विचारों को समाज और राजनीति के वास्तविक संदर्भों में रखकर विसंगति का बोध जगा रही थी ।[1]" कमलेश्वर की कहानी "बयान", भीष्म साहनी की कहानी "मौकापरस्त" तथा शेखर जोशी की कहानी "मेंटल" में यह विसंगति बोध अनेक स्तरों पर उजागर हुआ है । "बयान" आत्म स्वीकृति की शैली में लिखी गई कहानी है जो व्यंग्यात्मक विन्यास के माध्यम से व्यवस्था और व्यक्ति के बीच व्याप्त नंगी सच को उघाड़ने में समर्थ है । व्यवस्था तंत्र का अमानवीय और अनैतिक चेहरा इस कहानी में अपनी पूरी बीभत्सता के साथ उद्घाटित हुआ है । कहानी के व्यंग्यात्मक विन्यास में लिपटा हुआ व्यवस्था के प्रति विद्रोह का भाव कहानी में उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है ।

---

1. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - नरेन्द्र मोहन, पृ.37

"मौकापरस्त" में राजनीतिक नेताओं के पाखंड और धूर्तता को बडी तटस्थता और क्रूरता के साथ व्यक्त किया गया है । मौत को भी अपने लाभ केलिए इस्तेमाल करनेवाले राजनीतिक नेता, इस कहानी में उन लड़कों से भी ज्यादा चालाक और धूर्त मालूम पडते हैं जो बूचडखाने में ले जाती हुई निरीह बकरियों का दूध दुहते हैं । "मेंटल" में व्यवस्था तंत्र में पडे आदमी की दशा, प्रतिरोध की उसकी शक्ति और व्यवस्था द्वारा उसे पागल करार दिये जाने की धूर्तता, पूरी स्वाभाविकता के साथ अभिव्यक्त हुई है ।

नयी कहानी का शिल्प

नयी कहानी के शिल्प में समग्र परिवर्तन लक्षित होता है । नयी कहानी ने शिल्प की दृष्टि से जो दिशाएँ ग्रहण की हैं उनमें मौलिकता सर्वत्र द्रष्टव्य है । "यह मौलिकता कथाग्रहण की विधि, चरित्र निदर्शन, वातावरण तथा परिस्थिति के आकलन और कहानी के संपूर्ण संयोजन में देखी जा सकती है[1]।" कहने का मतलब यही है कि नयी कहानी में आशय और अभिव्यक्ति दोनों दृष्टियों से परिवर्तन हुये हैं । नयी कहानियों में पहली बार शिल्प के प्रति गंभीर जागरूकता का परिचय मिलता है क्योंकि नये कहानीकारों ने कलात्मक तत्वों का उपयोग वास्तविक जीवन मर्म को उद्घाटित करने के लिये किया ।

---

1. आधुनिक हिन्दी कहानी - सं. गंगाप्रसाद विमल - परमानन्द श्रीवास्तव का लेख, पृ.96

भाषा

नयी कहानी की संरचना में कहानीकारों के आत्मन्वेषण की संवेदना की महत्वपूर्ण भूमिका रही है जिसका प्रभाव उसकी भाषा पर भी पडा है क्योंकि "कृतिकार के नवीनतम विकास की दिशाएँ प्रमुख रूप से उसकी भाषा प्रयोग विधि में प्रतिफलित होती है[1]।" नये कहानीकारों ने नयी भाषा की खोज की है। इन कहानीकारों के पूर्व की भाषा में जीवन का स्पन्दन चित्रित करने की शक्ति नहीं थी क्योंकि तब तक "कहानी अपना मुहावरा ही नहीं ढूँढ पायी थी[2]।" पर नयी कहानी में कहानी अपना मुहावरा ढूँढ लेती है, गद्य में अक्कचाहट नहीं, उल्टे एक प्रवाह दिखाई देता है। नये कहानीकारों ने भाषा में एक नई रवानी और जोश को भरा - "उन्होंने स्वातंत्र्योत्तर काल की हिन्दी कहानी को नई दिशा ही नहीं दी, वरन् भाषा को नई अर्थवत्ता दी[3]।" नये कहानीकार की आम भाषा में भी एक नैसर्गिक प्रवाह है। बोलचाल की भाषा की ओर उसकी दृष्टि गई। वास्तव में नई कहानी ने अपने मुहावरे को कोशों और व्याकरण ग्रन्थों में खोजने के बजाय उसे मानव के यथार्थ परिवेश में से खोजा है। नयी कहानी की भाषा इसीलिए अकृत्रिम है तथा वहाँ भाषा की संभावना को शब्दों के कोशगत अर्थों में न देखकर अर्थ से व्यापक अर्थ ध्वनित करनेवाली शक्ति के रूप में देखा गया है - "शब्दों को एक कृत्रिम अर्थवत्ता देने के बजाय भाषा की ऐतिहासिक अर्थवत्ता की खोज करना और (निजी) अनुभूति की विशिष्टता से उसे नया संस्कार देना-यह इस पीढी के

---

1. स्थितियाँ रेखांकित - गोविन्द मिश्र, पृ.19
2. भाषा और संवेदना - रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ.61
3. आधुनिक कहानी का परिपार्श्व -- लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ.88

सभी लेखकों का साझा प्रयत्न रहा है[1]।" इस तथ्य को भीष्म साहनी की कहानी "चीफ की दावत" के इस अंश से समझा जा सकता है - "बरामदे में पहुँचते ही शामनाथ साहसा ठिठक गये। जो दृश्य उन्होंने देखा, उससे उनकी टाँगे लडखडा गई और क्षण-भर में सारा नशा हिरन होने लगा। बरामदे में ऐन कोठरी के बाहर माँ अपनी कुर्सी पर ज्यों की त्यों बैठी थीं, मगर दोनों पाँव कुर्सी की सीट पर रखे हुए, और सिर दायें से बायें और बायें से दायें झूल रहा था और मुँह में से लगातार खर्राटों की आवाज़ें आ रही थी[2]।" नये कहानीकार ने अपने भीतर और अपने समय में से ही ऐसी भाषा की खोज की है और ऐसी भाषा के द्वारा जीवन मूल्यों का स्पष्टीकरण किया है - "..... यह भाषा मरते हुए शानदार अतीत की नहीं, उसीमें से फूटते हुए विलक्षण वर्तमान की भाषा है। उस अनाम, अरसित, आदिम मनुष्य की जो मूल्य और संस्कार चाहता है अपनी मानसिक और भौतिक दुनिया चाहता है[3]।" इस प्रकार नये कहानीकारों ने भाषा की जडता को तोडा है। इन कहानीकारों ने भाषा को अपने-अपने ढंग से नया अर्थ और नया तेवर प्रदान किया है।

सांकेतिकता

सांकेतिकता नयी कहानी की अपनी विशिष्टता है। डॉ॰ नामवरसिंह के अनुसार, "नयी कहानी के रूप-गठन और शब्द गठन दोनों सांकेतिक है अर्थात् नयी कहानी में स्थल-स्थल पर संकेत उभरे हैं जो परस्पर जुडे हैं और इनमें से प्रत्येक कभी पूर्ववर्ती तो कभी परवर्ती की ओर सांकेतिक हैं। इनकी स्थिति वैसी ही है - देह में जैसे रक्त अथवा प्राण[4]।" वास्तव में सांकेतिकता के

---

1. बकलम खुद - मोहन राकेश, पृ॰75
2. एक दुनिया समानांतर - सं॰राजेन्द्र यादव - भीष्म साहनी की कहानी "चीफ की दावत", पृ॰226
3. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर, पृ॰175
4. कहानी - नई कहानी - नामवरसिंह, पृ॰42

विभिन्न स्तरों का विकास "नयी कहानी" की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है । निश्चय ही नयी कहानी में सांकेतिकता का अत्यंत सूक्ष्म उपयोग किया गया है और यह कथन युक्तिपूर्ण है कि "आज की कहानी संकेत करती नहीं, बल्कि संकेत है[1]।" सांकेतिक अर्थवत्ता से युक्त होने पर ही नयी कहानी सीधी चेतना तथा अनुभूति के गहरे स्तरों को छूने में समर्थ हो सकी है । नये कहानीकार ने व्यक्ति मन और परिवेश में जो अन्तर्विरोध है उसे संकेतों द्वारा व्यक्त किया है ।

कहानी की सांकेतिकता के संदर्भ में कमलेश्वर की कहानी "खोई हुई दिशाएं" महत्वपूर्ण है । इस कहानी में लेखक ने नितान्त अमूर्त बिम्बों का सहारा लेते हुए कथानायक चंदर के अकेलेपनको चित्रित किया है । इन बिम्बों के सहारे लेखक ने चन्दर के परिवेश से कटे हुए बोध को भी रूपायित किया है । "खोई हुई दिशाएं" कहानी महानगरीय अजनबीयत पर लिखी गई कहानी है । कस्बे मे आया हुआ चन्दर महानगर में आकर स्वयं को निपट अकेला और अजनबी अनुभव करता है । लेखक ने चन्दर की इस अजनबीयत को सांकेतिक भाषा द्वारा यों मूर्त कर दिया है - "कनाटप्लेस में खुले हुए लान हैं । तनहा पेड हैं और उन पर दूर-दूर खडे तनहा पेडों के नीचे नगर निगम की बेंचे हैं जिन पर थके हुए लोग बैठे हैं और लान में एकाध बच्चे दौड रहे हैं[2]।"

मोहन राकेश की कहानी "एक और ज़िन्दगी" सांकेतिक अर्थवत्ता को प्रस्तुत करनेवाली उत्कृष्ट कहानी है । अमूर्त बिम्बों के ज़रिये इस कहानी में एक पिता के मन में होनेवाले द्वन्द्व को रूपायित किया गया है ।

---

1. कहानी - नई कहानी - नामवरसिंह, पृ.42
2. खोई हुइ दिशाएँ - कमलेश्वर, पृ.33-34

समय ज्यों-ज्यों बीतता जाता है त्यों-त्यों पिता के मन में शोक का कोहरा और भी गाढा होता जाता है । बेटे की राह जोतते-जोतते वह थक जाता है और साथ ही यह भी निश्चित नहीं कि आखिर बेटा लौट आयेगा या नहीं । अंतत: जब वह आ ही जाता है तो उसके मन से कोहरे के दूर होने की बात उसकी मानसिकता को सूचित करती है - "कोहरे का पर्दा धीरे-धीरे उठने लगा तो मीलों तक फैले हरियाली के रंगमंच की धुंधली रेखाएं स्पष्ट हो उठीं[1] ।"

राजेन्द्र यादव की कहानी "प्रतीक्षा" में हम देखते हैं कि लेखक नन्दा को बीच में लाकर स्वयं अलग हो जाता है और गीता के मन में निहित यौन कुंठाओं के सारे स्तर नंदा के प्रति उसकी व्याकुलता और मानसिक आसक्ति के संकेतों द्वारा उद्घाटित कर देता है । इस कहानी में सांकेतिकता का सबसे बडा आधार तो यही है कि नन्दा का चरित्र गीता की कुंठाओं के लिए साधन है, माध्यम है - "तब गीता को लगा कि यह उसकी छाती पर सिर रखे नन्दा नहीं, स्वयं उसके भीतर से कोई बोल रहा है[2] ।" इस एक वाक्य से ही कहानी का सांकेतिक प्रयोजन प्रत्यक्ष हो उठता है ।

नये कहानीकार के भीतर एक प्रकार की मानसिक उथल-पुथल की समस्या बराबर बनी रहती है । सांकेतिक अर्थवत्ता के ज़रिये ही वह अपनी रचनात्मक प्रक्रिया में इस समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है । मोहन राकेश का यह कथन सार्थक ही है कि "पिछले दशक में लिखी गई हिन्दी कहानियों की विशिष्ट उपलब्धि सम्भवत: यही है कि उनमें सांकेतिकता के विभिन्न स्तरों का बहुमुख विकास हुआ है[3] ।"

---

1. रोयें रोशें - मोहन राकेश, पृ.104
2. किनारे से किनारे तक - राजेन्द्र यादव, पृ.35
3. नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति - सं.देवीशंकर अवस्थी - मोहन राकेश का लेख, पृ.92

प्रतीक

व्यंजना के नये माध्यम की खोज में नयी कहानी ने नये और उपयुक्त प्रतीकों का अन्वेषण किया है । रचना में प्रवाहमान अन्तर्धाराओं को वह प्रतीक पद्धति द्वारा ही व्यक्त करती है । प्रतीक की विशिष्टता उसके लिए भाषा प्रक्रिया की नहीं, समस्त रचनात्मक अनुभवों को रूप देने के लिए व्यक्तित्व का जो विलयन अपेक्षित होता है उसके लिए भी है ।

नयी कहानी को प्रतीकों ने निश्चय ही सार्थक कलात्मकता और सांकेतिकता प्रदान की है । अन्तर्जगत् के लक्ष्यहीन बहते यथार्थ को लक्ष्य, और बहिर्जगत् की लक्ष्योन्मुख दौडती वास्तविकता को गहराई दी है - "यथार्थ कथानक पहले गढा जाता था, फिर उसकी प्रतिक्रिया में विशृंखलित हो गया - अब उसे सार्थक गठन देने का श्रेय भी प्रतीकों को दिया जा सकेगा"[1] ।

राजेन्द्र यादव की कहानी "प्रश्नवाचक पेड" में पेड जीवन और प्रकृति के गहरे असन्तुलन या असंगति का प्रतीक है यद्यपि कहानी के चमत्कारपूर्ण सुझावों के बीच प्रतीक का प्रभैरव इस प्रकार खो गया है कि वह अन्त में पाठक को अघात की भांति लगता है - "डाक्टर चटन ने खट से टेबल-लैम्प बुझा दिया । बाहर चांदनी में वह बबूल का प्रश्नवाचक पेड सिर झुकाये खडा कुछ सोचता खुली खिडकी से साफ दिखाई दे रहा था । जो फिर एक बार छूट से रह गया । इसे तो किसी तरह कटवाना ही पडेगा ।

---

1. एक दुनिया समानान्तर - सं॰राजेन्द्र यादव, पृ॰17

माथुर की बात याद आयी तो चन्द्रा का चेहरा सामने आ गया । एक अजीब-सा ख्याल दिमाग में उठा, चाँदनी में बबूल का ठूँठ पेड कैसा लगता है जाने ।"[1]

नयी कहानी में इस प्रकार के कई सार्थक प्रतीकों का प्रयोग हुआ है । उषा प्रियंवदा की "मछलियाँ" भीष्म साहनी की "भटकती हुई राख" कमलेश्वर की "साँप", मोहन राकेश की "आर्द्रा" तथा निर्मल वर्मा की "परिन्दे" आदि श्रेष्ठ प्रतीकात्मक कहानियाँ है जिनमें प्रतीकों का प्रयोग कथ्य को स्पष्ट और संप्रेषित करने के लिए हुआ है ।

बिम्ब

नयी कहानी में बिम्बों का खूब प्रयोग हुआ है । जीवन के कई नये खंडचित्र नयी कहानी में सजीव हो उठे हैं । नये बिम्ब वस्तुतः नये कहानीकारों के विकसित एन्द्रीय बोध के सूचक है और जो कहानीकार जितना ही संवेदनशील है, उसकी कहानी का वातावरण उतना ही मार्मिक और सजीव हो उठा है । निर्मल वर्मा की कहानी "परिन्दे" में बिम्बों के सफल प्रयोग को देखा जा सकता है । इस कहानी में "पियानो के संगीत रुई के छुई-मुई रेशों से अब तक मस्तिष्क की थकी माँदी नसों पर फडफडा रहे हैं । संगीत के सुर मानों एक ऊँची पहाडी पर चढकर हाँफती हुई

---

1. छोटे-छोटे ताजमहल और अन्य कहानियाँ - राजेन्द्र यादव, पृ.155

साँसों को आकाश की शून्यता में बिखेरते हुए नीचे उतर रहे हैं।[1]"
इसी प्रकार मीडोज में उतरती हुई साँझ की छायाओं में न जाने कितने स्वर एक दूसरे से घुल-मिल जाते हैं। ऐसे सजीव बिम्बों द्वारा ही नयी कहानी मन में संवेदनाएँ जगाने में समर्थ हो जाती है जिन तक पुराने कथाकारों के चरित्र और कथानक नहीं पहुँच पाये। कुल मिलाकर, बिम्ब-प्रयोग से नयी कहानी की भावानुभूति में सूक्ष्म एन्द्रियता का विस्तार हुआ है, साथ ही छिपे हुए आलोक में यथार्थ की स्थापना भी।

प्रयोगशीलता

"नयी कहानी" में शिल्प के स्तर पर कई प्रयोग मिलते हैं। राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर आदि कहानीकारों ने अपनी कहानियों में शिल्प के नितांत नूतन प्रयोग किये हैं। कमलेश्वर की कहानी "राजा निरबंसिया" प्रयोगात्मक शिल्प का मनोरम उदाहरण प्रस्तुत करती है। इस कहानी में एक लोककथा की पृष्ठभूमि में एक आधुनिक निम्न मध्यवर्गीय परिवार की कहानी कही गई है। दो भिन्न युगों में दो निरबंसियों की जीवन-कथा दो रेखाओं की तरह एक दूसरे को छूती और काटती चलती है। कहानी में लोककथा का उपयोग नवीनता का द्योतक है। यह लोककथा मुख्यकथा को और भी मार्मिकता प्रदान करती है। मुख्य कथा में जैसे ही संवेदना की तीव्रता आती है, वह सहधर्मी लोककथा से छू जाती है और हम देखते हैं कि लोककथा का टूटा हुआ सूत्र अनजाने ही हाथ में आ गया है। शिल्प के लिए लाई हुई अतीत की यह कथा वर्तमान वास्तविकता क

---

1. परिन्दे - निर्मल वर्मा, पृ.34

उभारने में समर्थ है । इसके साथ ही अतीत का अर्थ भी हमारे लिए बदल देती है । अंत में दो कथाओं की विषमता दो युगों की गहरी खाई पर ही रोशनी नहीं डालती है, बल्कि वर्तमान वास्तविकता पर मीठा व्यंग्य भी करती है कि इतना विकास करने के बाद भी आज का निम्न मध्यवर्गीय युवक अपनी पत्नी को स्वीकार नहीं कर सकता, जबकि शताब्दियों पहले एक राजा ने सारी लोकमर्यादा तोड़कर अपनी रानी को अपना लिया । यह अंतर दो युगों का है या दो वर्गों का या कल्पना और यथार्थ का यह प्रश्न कहानी में बराबर बना रहता है । शिल्प-विधान का यह प्रयोग कहानी में अनेक अर्थों और व्याख्याओं की संभावना भर देता है ।

अन्ततः कहा जा सकता है कि "नयी कहानी" में कई ऐसे शिल्पगत प्रयोग हुए हैं जिन्होंने कहानी को नई दिशा और दृष्टि देने के साथ-साथ, संप्रेषण के नये द्वार खोले हैं ।

❦❦❦❦❦❦❦❦❦❦❦❦❦

अध्याय - दो

अमरकान्त का रचना-व्यक्तित्व

अमरकांत ने यद्यपि अपना कथा-लेखन "नई कहानी" के दौर में शुरू किया था तो भी वे अपने अन्य समकालीन कथालेखकों के समान प्रसिद्धि की रोशनी के केन्द्र में नहीं रहे । उनकी चर्चा हमेशा प्रासंगिक रूप से होती रही । वे कभी नयी कहानी के झण्डाबरदारों में नहीं गिने गये । प्रचलित कथा-आन्दोलनों से विरक्ति तथा नित नये बनते-बिगड़ते कथा-शिल्पों से विमुखता, सहज ढंग से अपने चारों ओर के यथार्थ को समझने की चेष्टा आदि विशेषताएँ अमरकांत को अपनी पीढ़ी के ही नहीं, बल्कि बाद के भी अन्य चमत्कार प्रिय कथालेखकों से भी अलग कर देती है ।

अमरकांत की कहानियों में मध्यवर्ग, विशेषकर निम्न मध्यवर्ग के जीवनानुभवों और जिजीविषाओं का बेहद प्रभावशाली और अन्तरंग चित्रण मिलता है । अक्सर सपाट से नज़र आनेवाले कथ्यों में भी वे अपने जीवन्त मानवीय संस्पर्श के कारण अनोखी आभा पैदा कर देते हैं । सहज सरल रूपबन्धवाली ये कहानियाँ जिन्दगी की जटिलताओं को जिस तरह समेटे रहती हैं कभी-कभी वह चकित भी कर देती है; और यह अमरकांत की खास विशेषता है ।

भारतीयता की बात साहित्य और कला के संदर्भ में असंगत सी लगती है, किन्तु अमरकान्त जैसे कथाकार इस बात के लिए कभी-कभी मज़बूर कर देते हैं कि यह समझा जाय कि भारतीयता का संदर्भ कला और उसकी समीक्षा केलिए कितनी महत्वपूर्ण है । यही कारण है कि "नयी कहानी" "साठोत्तरी कहानी", "अकहानी", "सचेतन कहानी", "समान्तर कहानी" जैसे तथाकथित आन्दोलन आते जाते रहते हैं और उनसे जुड़े कथाकार भी समुद्र की झाग की तरह समाप्त हो जाते हैं, किन्तु अमरकांत - जो कभी इन जययात्राओं में शामिल नहीं हुए - की कभी बन्द गलियों का मुँह नहीं देखना पडा ।

अपने संस्मरण "एक साधारण मध्यवर्गीय चेहरे की तेजस्विता"[1] में गिरिराज किशोर ने अमरकांत पर लिखा है - "अमरकांत के संदर्भ में हमेशा एक चित्र उभरता है । एक व्यक्ति लेटा हुआ है और उसके शरीर से बूँद बूँद रक्त बोतल में इकट्ठा होता रहता है जब बोतल भर जाती है तो दूसरी बोतल लगा दी जाती है । कहा नहीं जा सकता कि सभी जीवन्त लेखकों के

---

1. अमरकांत वर्ष 1, पृ.212

संदर्भ में यह चित्र सही उतरता है या नहीं । परन्तु अमरकांत जैसे लेखकों के संदर्भ में एकदम सही है । अगर ऐसा न हुआ होता तो अमरकांत भी इसी भीड़ में खो गये होते जो पहले बढ़ा करती है फिर धीरे-धीरे घट जाती है[1] ।"

जीवनवृत्त-आरंभिक रेखाएँ

अमरकांत का जन्म 10 जुलाई, 1925 को उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के छोटे से गाँव नगरा में हुआ । उनका जन्म एक कायस्थ परिवार में हुआ - "उत्तर प्रदेश में बलिया जिले के छोटे से गाँव भगमलपुर को आप नगरा भी कह सकते हैं, क्योंकि वह नगरा का एक टोला-सा लगता है, जो सड़क के दूसरी ओर बसा है । भगमलपुर में अहीरों का टोला था उत्तर में और दक्षिण में थी चमरटोली, जिनके बीच कायस्थों के तीन परिवार थे । इसी गाँव में, एक कायस्थ परिवार में, आषाढ़ के किसी बरसाती दिन को उसका जन्म हुआ ।"

कुछ बड़ा हो जाने पर उनकी भर्ती नगरा के प्राथमिक विद्यालय में करा दी गई । उनके दो नाम थे - एक श्रीराम और दूसरा अमरनाथ लेकिन पहला नाम ही चल पाया । अमरनाथ किसी साधु का रखा हुआ नाम था ।

प्राथमिक शिक्षा की समाप्ति पर वे बलिया शहर में पिताजी के यहाँ लौट आये । उनके पिताजी मुख्तार थे । उनका नाम पहले तहसीली मिडिल स्कूल, फिर गवर्नमेन्ट स्कूल में लिखा दिया गया । वे घर के बाहर बेहद शर्मीले और चुप स्वभाव वाले थे पर घर के अन्दर उनका स्वभाव इससे भिन्न था ।

---

1. अमरकान्त वर्ष 1 : अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ.10

हाकी-फुटबाल, चिक्का-कबडी, गुल्ली-डंडा, गोली, लट्टू वगैरह खेलों के वे शौकिन थे । उन्हें लडकियों के साथ खेलने में भी मजा आता था पर वे अवसर चिढा-चिढाकर भगा दिये जाते ।

बचपन से ही अमरकान्त के मन में दीन-दुखियों के प्रति तीव्र सहानुभूति थी । इसका जिक्र करते हुए उन्होंने लिखी हैं - "दरवाज़े पर रोज़ दुखिया, दरिद्र, अपाहिज, बेसहाय लोग आते थे, मुंह खोलकर गिड-गिडाते थे और लोगों की डाँट-डपट खाते रहते थे । किसी दावत समारोह के बाद मेहतर लोग कूडे पर फेंके गये जूठे पत्तलों के लिए आपस में लड़ते थे । ऐसे दृश्यों को देखकर वह उदास हो जाता ....!" ।

अमरकान्त के घर में कोई साहित्यिक वातावरण नहीं था । उनके पिताजी उर्दू और फारसी के जानकार थे फिर भी उनको हिन्दी का कामचलाऊ ज्ञान था । उन्हें घर में एक पण्डित जी पढाते थे । चूंकि उनके पिताजी चलता पुस्तकालय के सदस्य थे इसलिए भी दो-एक पुस्तकें उनके घर पहुंचा दी जातीं । पिताजी तो उन पुस्तकों को पढ नहीं पाते थे, पर अमरकान्त चुरा-चुरा कर उन्हें पढ लिया करते थे । उनमें से कई पुस्तकें हलकी, फुलकी, रूमानी और जासूसी होती थी, लेकिन कई बहुत अच्छी पुस्तकें होती थीं, जिनका उन पर अच्छा असर पडा - "याद है, जब उसे महाभारत अथवा शरत्चन्द्र की चरित्रहीन पढने को मिली थी, तो वह जाना-पीना तक भूल गया था[2]।" अमरकान्त को बहुत सी बातें विरासत में अपने पिता से मिली थीं । शुरु शुरु में उन पर प्रेमचन्द का प्रभाव कम और

---

1. अमरकान्त वर्षा । सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ.12
2. वही, पृ.12

शरश्चन्द्र की रोमांटिक रचनाओं का प्रभाव ज्यादा था । पर जैसे-जैसे समय गुजरता गया वे प्रेमचन्द और टैगोर की रचनाओं से प्रभावित होते गये जिसके फलस्वरूप शरश्चन्द्र की रोमांटिकता से उन्हें छुटकारा मिला और वे स्वस्थ सामाजिक लेखन की ओर उन्मुख हुए ।

लेखन की शुरूआत

शरच्चन्द्र की किसी कहानी से प्रभावित होकर ही उन्होंने कहानी-लेखन की शुरूआत की "एक शाम की उसे याद आती है । मौसम में कुछ हलकी-फुल्की सिहरन थी । उसने शरच्चन्द्र की कोई सशक्त कहानी पढकर अभी-अभी समाप्त की थी । अंधेरा घिरने लगा था । पुस्तक समाप्त करते ही उसने अपने अन्दर एक अद्भुत परिवर्तन का अनुभव किया, जैसे बिजली दौड गई हो । वह बरामदे से बाहर निकल आया । मकान और सामने के सडक के बीच मजे की खुली जगह थी । वह वहाँ टहलने लगा । सहसा उसके अन्दर से आवाज उठी, "मैं लिख सकता हूँ ..... ठीक वैसा ही उसी तरह..... ।"[1]

इस तरह रोमांटिक ढंग से उनके लेखन की शुरूआत हुई । नवीं कक्षा में पढते वक्त उनके एक मित्र ने एक हस्तलिखित पत्रिका निकाली । पत्रिका केलिये उनसे भी कुछ लिखने को कहा गया । उन्होंने काफी आत्म-विश्वास के साथ एक कहानी लिखी । बाद में उस हस्तलिखित पत्रिका का एक और अंक निकला जिसमें उन्होंने एक और कहानी लिखी ।

---

1. अमरकान्त वर्मा । - अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ.15

नवीं कक्षा में पढते वक्त उनके बहुत से भ्रम टूटे । उन्हें स्वामी शिवानंद की "ब्रह्मचर्य ही जीवन है से लेकर क्रान्तिकारियों की पुस्तकों तक विशेष रूप से मन्मथनाथ गुप्त की पुस्तक "भारत में सशस्त्र क्रान्ति की चेष्टा" और यशपाल द्वारा संपादित "विप्लव" पढने को मिली ।

हाई-स्कूल की परीक्षा के बाद उनके बहुत साथी बिखर गये । उन्हें कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के एक क्लास में जाने का अवसर मिला । वहाँ उनका सम्पर्क श्री॰ नमर्देश्वर चतुर्वेदी से हुआ । चतुर्वेदी जी हिन्दी के लेखक थे । चतुर्वेदी जी सामाजिक विचारधारा के क्रान्तिकारी नेताके रूप में विख्यात थे । सोशलिस्ट पार्टी के क्लास में ही उन्हें राहुल जी की कई पुस्तकों को पढने का अवसर मिला । थर्ड इन्टरनेशनल का घोषणा-पत्र भी प्राप्त हुआ । सोवियट रूस पर भी कई पुस्तकें मिलीं । यहीं पर उन्हें देश की स्वतंत्रता का अर्थ पहली बार समझ में आया - "वैज्ञानिक समाजवाद । समाजवाद और साम्यवाद का अन्तर । समाजवादी देश सोवियट रूस ।"[1]

इस काल में महात्मा गाँधी एवं जवाहरलाल नेहरू की आत्म-कथाएँ भी उन्हें पढने को मिली । इन आत्मकथाओं का उन पर गहरा असर पडा । हाई-स्कूल परीक्षा के बाद उनमें तेज़ी से परिवर्तन हुआ । वे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य बन गये ।

उनकी राजनीतिक शिक्षा कोई गम्भीर नहीं थी, बल्कि आरम्भिक किस्म की ही थी । इस समय उन पर गाँधी जी, नेहरू, जयप्रकाश नारायण और क्रान्तिकारियों की सच्चाई तथा त्याग-बलिदान का एक अजीब मिला-जुला प्रभाव था ।

---

1. अमरकान्त वर्ष 1९ - अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ॰20

इण्टरमीडियेट में प्रवेश लेने के बाद उन्होंने शरच्चन्द्र के अनुकरण पर कई लम्बी-लम्बी कहानियाँ लिखीं - "उन कहानियों में प्रेम एवं करुणा लबालब भरी होती थी, पर उनका आधार बहुधा कोरी कल्पना ही होता था, जिससे वे अस्वाभाविकता एवं हास्यास्पदता की सीमाओं को छूने लगती थीं।"

इण्टर ही में जब सेंट एण्ड्रूज़ कालेज, गोरखपुर छोड़कर इविंग क्रिश्चियन कालेज, इलाहाबाद में आ गये तो उन्हें कई किताबें पढने को मिली उनमें एम॰एन॰ राय की एक पुस्तक में मार्क्सवादी दृष्टि से "सभ्यता" की व्याख्या की गई थी। ऐसी पुस्तकों ने उनके मानसिक क्षितिज का विस्तार किया।

सन् 1942 में गाँधी जी ने "भारत छोडो" आन्दोलन छेड दिया था। गाँधी जी के "करो या मरो" आह्वान से प्रभावित होकर उन्होंने पढाई छोड देने का निश्चय किया। इसके बाद वे घोर निराशा मे गुजरने लगे। उन दिनों उन पर गाँधी जी का जबरदस्त प्रभाव पडा था। वे शारीरिक और मानसिक स्तर पर पूर्ण रूप से स्वयं को पवित्र रखना चाहते थे।

यथार्थ से साक्षात्कार

सन् 1946 में जब यह निश्चित हो गया कि भारत को आज़ादी मिल जायेगी, तो फिर उन्होंने पढाई शुरू कर दी, इन्टर किया और शादी के लिए भी अपनी स्वीकृति दे दी।

---

1. अमरकान्त - वर्षः। - अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ॰25

स्वतन्त्रता प्राप्ति, देश का विभाजन और फिर आजादी के बाद भ्रष्टाचार, साम्प्रदायवाद जैसी घटनाओं ने उनके अन्दर एक ऐसी प्रक्रिया को जन्म दिया जिससे उनकी आंखों के सामने से रोमांटिसिज्म के पर्दे हटने लगे । अब उन्हें यह स्पष्ट हो गया कि राजनीति उनका क्षेत्र नहीं है । बल्कि हिन्दी और हिन्दी साहित्य ही उनका कार्य-क्षेत्र हो सकता है । उन्होंने देशी एवं विदेशी लेखकों की रचनाओं से परिचय प्राप्त करने की कोशिश की, प्रेमचन्द, शरच्चन्द्र, रवीन्द्रनाथ टेगौर, गोर्की, डास्टायवस्की, मोपांसा, रोमा रोला, तुर्गनेव, हार्डी, डिकटेस, जैनेन्द्र कुमार, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, पहाडी, रागेय राघव तथा बहुत से अन्य लेखकों को उन्होंने पढ डाला । गोर्की व डास्टायवास्की से वे बेहद प्रभावित हुए । गोर्की का उपन्यास "मां" तथा डास्टायवस्की का उपन्यास "क्राइम एंड पनिशमेंट" वे पढ चुके थे । दोनों ही रचनाओं ने उन पर अपना प्रभाव छोडा । दो अन्य विदेशी लेखकों ने भी उन्हें प्रभावित किया, वे है - टालस्टॉय और चेखव ।

प्रयाग विश्वविद्यालय से बी·ए· करने के उपरान्त उन्होंने हिन्दी साहित्य में काम करने का निश्चय किया । उन्होंने पत्रकार बनने का फैसला करके आगरा के दैनिक "सैनिक" के सम्पादकीय विभाग में कार्य शुरू किया । उन्हीं दिनों "सैनिक" विशेषांक में उनकी पहले की लिखी एक कहानी "बाबू" छपी ।

प्रगतिशील लेखक संघ का महत्व

उनके साथ "सैनिक" में काम करनेवाले श्री·विश्वनाथ भटेले उन्हें प्रगतिशील लेखक संघ की बैठकों में ले जाने लगे । भटेले के साथ ही वे कई बार रागेय राघव के मकान पर गये थे । प्रगतिशील लेखक संघ में उन्हें

मीटिंग के अंत में गजल गाने के लिए कहा जाता । इसी रूप में उनकी मान्यता थी । प्रगतिशील लेखक संघ में उन्हें गंभीरता से नहीं लिया जाता था उन्होंने "इन्टरव्यू" नामक एक कहानी लिखकर उसको प्रगतिशील लेखक संघ की बैठक में सुनाया और तब उनकी इस कहानी की वहाँ बहुत प्रशंसा हुई - "उसने इन्टरव्यू नामक कहानी लिख डाली और प्रगतिशील लेखक संघ की अगली बैठक में अपनी वह कहानी सुनाई ।" बैठक में मुक्त कंठ से कहानी की प्रशंसा की गई ।"

इसके बाद उनका जीवन एकदम बदल गया । उनका पुराना साथ-संग छूट गया । अब गंभीरतापूर्व उनका एक रचनात्मक जीवन आरंभ हुआ । उन्होंने और कई कहानियाँ लिखी - "बाबा" (जो बाद में सवा रुपये" शीर्षक से प्रकाशित हुई), "गले की जंजीर", "कम्युनिस्ट", "नौकर" "सुहागिन" आदि । हर कहानी उन्होंने प्रगतिशील लेखक संघ में सुनाई और उन्हें प्रशंसा भी मिली ।

इसके बाद वे इलाहाबाद के "अमृत पत्रिका" नामक दैनिक पत्र के सम्पादकीय विभाग में आ गये । यहाँ वे प्रगतिशील लेखक संघ की कार्यवाहियों में भाग लेने लगे ।

लेकिन इलाहाबाद का जीवन उनके लिये बहुत सुखमय नहीं था । उन पर कई तरह के दबाव थे । इनमें आर्थिक दबाव मुख्य था ।

।· अमरकान्त वर्मा । - अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ·3।

आगरा में लेखन की शुरुआत के पहले से ही वे शरच्चन्द्र के रोमांटिसिज्म से मुक्त होने का प्रयास कर रहे थे । अब उन्हें शरच्चन्द्र की भावुकता से ज्यादा प्रेमचन्द की ऐतिहासिक दृष्टि सम्पन्नता एवं प्रगतिशीलता आकर्षित करने लगी ।

अमरकांत को सन् 1955 में कहानी के विशेषांक केलिए एक कहानी भेजने का निमंत्रण मिला । उन्होंने उसके लिए "दोपहर का भोजन" नामक कहानी लिखी । उन्होंने यह कहानी अपने छोटे भाई श्याम (केदार) को सुनाई । कितनी ही कहानियों के प्लाट उन्हें केदार से मिले हैं और "उसे प्रोत्साहन देने में केदार का भी भारी योग रहा है ।"[1]

इसके बाद वे बलिया गये । बलिया में उन्होंने "कहानी" पत्रिका में एक अखिल भारतीय कहानी प्रतियोगिता का विज्ञापन देखा । उन्होंने दस बारह दिन में वह कहानी लिखी जो बाद में "जिन्दगी और जोंक" के नाम से प्रकाशित हुई । फिर "डिप्टी कलक्टरी" नामक कहानी लिखी । केदार तथा अन्य मित्रों की मण्डली में उन्होंने वे दोनों कहानियों सुना सुनाई और तय हुआ कि डिप्टी कलक्टरी" ही प्रतियोगिता में भेजी जाय ।

इसके बाद वे अपने साहित्य के ज़रिये देश की साधारण जनता के साथ उनकी लडाई में शामिल हो गए - अन्याय, शोषण एवं निर्धनता से मुक्त होने की लडाई । "उनको अपने देश के लोगों से प्यार था । उनका साहस, उनकी अद्भुत जीवनशक्ति, त्याग-बलिदान और

---

1. अमरकान्त वर्ष । - अमरकान्त का आत्मकथ्य, पृ.33

बरदाश्त करने की क्षमता, उनकी उदारता और विनम्रता, उनका आलस्य, हार को जीत में परवर्तित करने की उनकी आदत, उनका साहस और उनकी विलक्षण प्रतिभा । उसके जीवन को एक सार्थक आधार मिल गया था ।"[1]

अमरकांत : साहित्य के क्षेत्र में

"मेरी रचनाओं में अपने इतिहास की विसंगतियों एवं असफलताओं पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त की गई है, प्रगतिशील शक्तियों का पक्ष लिया है तथा बदलाव की व्याकुलता ध्वनित हुई है[2] ।"
अमरकान्त के इस कथन के आधार पर उनकी रचनाओं पर नज़र डालने से विदित होता है कि अमरकांत एक पक्षधर लेखक है जो सामाजिक बदलावमें लेखक और लेखन की भूमिका को काफी महत्व देते हैं । अमरकांत के लेखन की शुरूआत एक कहानीकार के रूप में हुई । पर, एक कहानीकार के रूप में उन्हें मान्यता "डिप्टी कलक्टरी" नामक अपनी बहुचर्चित कहानी से मिली यद्यपि इसके पहले सन् 1955 ई॰ में ही उनकी चर्चित कहानियों में से एक "दोपहर का भोजन" कहानी के विशेषांक में छप चुकी थी - "अमरकांत की कहानी डिप्टी कलक्टरी" 1956 के कहानी विशेषांक में पुरस्कृत होकर छपी थी । अमरकांत उससे भी दो तीन वर्ष पहले से कहानियाँ लिख रहे थे और उनकी "दोपहर का भोजन" मेरे ख्याल में उनकी आरम्भिक कहानियों में थी जो कहानी में ही "डिप्टी कलक्टरी" से प्राय: दो वर्ष पूर्व प्रकाशित हो चुकी थी । लेकिन अमरकांत का नाम मुख्य रूप से "डिप्टी कलक्टरी" पर पुरस्कार की मुहर के बाद ही उभर कर इतने साफ ढंग से सामने आया था ।"[3]

1॰ अमरकान्त वर्ष । - अमरकांत का आत्मकथ्य, पृ॰34
2॰ वही, अमरकांत से डॉ॰ सत्यप्रकाश मिश्र का साक्षात्कार, पृ॰152
3॰ आलोचना - एप्रैल - जून 1977 में मधुरेश का लेख, पृ॰104-105

कहानियों में प्रतिबिम्बित अमरकांत

अमरकांत ने "नयी कहानी" के दौर में लिखना शुरू किया था। पर उनका सर्जक व्यक्तित्व "नयी कहानी" के आन्दोलन का अंग बनकर नहीं उससे स्वतंत्र रहकर विकसित हुआ। नयी कहानी के प्रवक्ताओं ने "नयी कहानी" संबंधी अपनी मान्यताओं की पुष्टि के तौर पर अमरकांत की कहानियों को उदाहृत ज़रूर किया। पर वे स्वयं "नयी कहानी" के प्रवक्ता के रूप में कभी आगे नहीं आए। "नयी कहानी" में "भोगे हुए क्षण" और "अनुभव की प्रामाणिकता" को जिस रूप में पेश किया गया था, उससे अमरकांत का दृष्टिकोण ही नहीं, उनकी कहानियों का मिज़ाज़ भी भिन्न है।

अमरकांत के चार कहानी संग्रह, ज़िन्दगी और जोंक" "देश के लोग", "मौत का नगर" एवं "मित्र मिलन तथा अन्य कहानियां" प्रकाशित हो चुके है। एक जीती-जागती परिस्थिति ने, पूरे रग-रेशों वाले एक परिवेश ने, उनकी कहानियों के अनुभव को निर्मित किया है। यह अनुभव केवल भोगे हुए क्षण का परिणाम नहीं है, यह अपने समय और समाज की अन्दरूनी अवस्था से जुडा हुआ अनुभव है। अमरकांत की कहानियों का संसार मध्यवर्ग या मध्यवर्गीय मानसिकता का संसार है। पर इस संसार को जितनी गहराई और विविधता से उन्होने देखा है, उतना अन्य किसी कहानिकार ने नहीं। उन्होंने अपनी कहानियों की वस्तु और कथ्य को मध्यवर्ग के साधारण जीवन में से उठाया है। "इस वर्ग के स्वभाव का, इसके पाखंडों और धूर्तताओं का, इसके टुच्चेपन और कमीनेपन का, इसकी विसंगतियों और विडंम्बनाओं का बडा सटीक और यथार्थपरक चित्रण अमरकांत की कहानियों में मिलता है।[1]" उनकी कहानी "डिप्टी कलक्टरी" हो या

---

1. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - डॉ. नरेन्द्र मोहन, पृ. 82

"दोपहर का भोजन" या "ज़िन्दगी और जोंक", मध्यवर्गीय मानसिकता के अनेक पहेलुओं को उघड़े हुए रूप में देखा जा सकता है ।

अमरकांत की वैचारिकता

ज़ोर-शोर, प्रचार-प्रसार और डौंडी और डिडुम की दुनिया से अमरकान्त बहुत अलग-थलग, लगभग उससे निरपेक्ष साहित्य-सृजन में रत रहे हैं, इसलिए उनके नाम का शोर उतना नहीं मचा, लेकिन उनकी पहचान अपने समकालीनों में सर्वथा सुस्पष्ट है । अमरकांत ने अपेक्षाकृत छोटे घेरे में अपने अनुभव की तमाम सम्पुटितता मे अपने को अभिव्यक्ति दी है और इसमें कहीं-कहीं वे अपने समकालीनों मे आगे चले गए हैं ।

अमरकांत सामाजिक संलग्नता को रचना का खास उद्देश्य मानते हैं - "आज के कथा लेखक केलिये यह ज़रूरी है कि वह और भी गहराई मे अपने समाज से जुड़े तथा और भी परिश्रम मे आज की प्रगतिशील सच्चाईयों का चित्रण करे ।[1]" सृजन की सामाजिक प्रेरणा के बारे में अमरकांत का विचार है कि सृजन एक गम्भीर सामाजिक दायित्व का कार्य है । "सृजन का क्षेत्र है जीवन । जो जीवन मिला हुआ है, उसी के सृजन की आवश्यकता रचनाकार को महसूस होती है[2] ।"

इस कथन पर कि "साहित्य स्वतंत्र व्यक्ति की स्वतंत्र व्यक्ति से बातचीत है । अमरकांत की सहमति नहीं है । इसका खंडन करते हुए अमरकांत यह मानते हैं कि साहित्य की इस ढंग की परिभाषा साहित्य के

---

1. अमरकांत वर्ष । - अमरकान्त से डा॰ सत्यप्रकाश मिश्र का साक्षात्कार, पृ॰ 117

2. वही

उद्देश्य को निष्फल करती है । वे अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए कहते हैं - "साहित्य सदा समाज के प्रति सम्बोधित एवं निवेदित होता है, किसी व्यक्ति विशेष के प्रति नहीं । अब स्पष्ट है कि साहित्य ऐसी अवस्था में ही फल-फूल सकता है, जिसमें गरीबी, अन्याय, झूठ, शोषण, अशिक्षा, भ्रष्टाचार आदि नहीं हैं, बल्कि जिसमें सभी व्यक्तियों को समान अवसर प्राप्त है और जिसमें सारा समाज साथ-साथ आगे बढता है । ऐसी कल्पना एक समाजवादी व्यवस्था में ही साकार और सार्थक हो सकती है[1] ।"

साहित्य और राजनीति के अन्तर्विरोध के बारे में अमरकांत के विचार हैं कि दोनों की शर्तें भिन्न होती है, तथा उनकी प्रवृत्ति में भी अन्तर होता है राजनीति की अनिवार्यता का पक्ष लेते हुए अमरकांत कहते हैं - "राजनीति भी मानव-विकास की एक सचाई को व्यक्त करने का माध्यम है और प्रत्येक साहित्यकार को उसकी सही जानकारी होनी चाहिए[2] ।"

प्रचारवादी साहित्य के चाहे वह जनवादी आग्रह को प्रचारित करने केलिए हो या वामपंथी विचारधारा को अथवा प्रतिक्रियावादी सिद्धान्तों को, अमरकांत विरोधी हैं । अमरकांत मानते हैं कि क्रांति आदि शब्दों की माला जपने से ही क्रान्ति नहीं हो जाती । तत्कालीन सामयिक परिस्थितियों का विश्लेषण, इतिहास की सही जानकारी तथा सामाजिक अन्तर्द्वन्द्वों की समझ से उत्पन्न प्रगतिशील वैचारिक दृष्टि पर

---

1. अमरकांत वर्ष । - अमरकांत से डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र का साक्षात्कार, पृ.110
2. वही, पृ.111

आधारित व्यापक संघटन, सही रणनीति का निर्धारण एवं विचार तथा कर्म की एकता क्रान्ति के लिए ज़रूरी होती है - "साहित्य में क्रान्तिकारी सिद्धान्तों अथवा किसी सिद्धांत का प्रतिपादन कठिन कार्य है क्योंकि यहां विचारों को संवेदनात्मक धरातल पर उतारने की समस्या होती है[1]।" प्रगतिशील साहित्य का पक्ष लेते हुए उसकी बारीकियों पर प्रकाश डालते हुए अमरकांत कहते हैं कि "प्रगतिशील साहित्य सृजन का कार्य गम्भीर दायित्व की मांग करता है। प्रगतिशील जीवन दृष्टि एक ऐतिहासिक दृष्टि भी होती है। यह दृष्टि दो स्तरों पर कार्य करती है। एक तो वह स्वस्थ मानवीय परम्पराओं को स्वीकार करती है, उनको आत्मसात करती है और उनको नई वाणी भी देती है और साथ ही वह मृत, अनुपयोगी और प्रतिगामी परंपराओं को अस्वीकार करती है[2]।"

अमरकांत यह भी मानते हैं कि लेखकीय स्तर पर प्रगतिशील लेखकों का आपसी मेलजोल ज़रूरी है। ज़िन्दगी को अन्तर्विरोधों से भरा मानते हुए साहित्य में उसकी अभिव्यक्ति पर ज़ोर देते हैं।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि अमरकांत की विचारधारा प्रगतिवाद के निकट पड़ती है और वे साहित्य को प्रगतिगामी शक्ति मानते हैं - "प्रगतिशील रचनाएँ मनुष्य की संघर्षशीलता को उजागर करती है[3]।"

---

1. अमरकांत वर्ष 1 - अमरकांत से डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र का साक्षात्कार, पृ.116
2. वही, पृ.118
3. वही, पृ.207 (अमरकांत से ममताकालिया की बातचित)

उपन्यासकार अमरकांत

अमरकांत का उपन्यास साहित्य मध्यवर्ग की एक विशिष्ट पहेलु को खोलता है । मध्यवर्ग को गुमराह करने में सबसे बडी कमज़ोरी "सेक्स" है । "सेक्स" के मात्र शारीरिक क्रिया कलापों के लिए भावुकतावश वह अपनी प्राणनिधि खो बैठता है । निराश होकर विक्षिप्त हो जाता है तथा सैकडों किशोरियों को वेश्यालय बसाने पर मज़बूर कर देता है । एक ओर वह शरीर की पवित्रता की वकालत करता है दूसरी ओर वही अंधेरे में उस पवित्रता को तोडता है । अंधेरे और उजाले का यह फर्क मध्यवर्ग में भरा पडा है । साहसहीन यह वर्ग शोषित और शोषकों के बीच में पेण्डुलम बना लटक रहा है । इसने मनुष्य के सामने खतरों का अम्बार लगा दिया है । अमरकांत इसी वर्ग की तथाकथित प्रेम याचना का सामाजिक पुनर्निर्माण करते हैं ।

"सूखा पत्ता" अमरकांत का पहला उपन्यास है । आत्म कथात्मक शैली में लिखे गये इस उपन्यास को लेखक ने नायक-चरित्र के सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए कुछ खंडों में विभाजित कर दिया है । उपन्यास का नायक कृष्णकुमार प्रारंभ में कमज़ोर, कायर, कम बोल सकने वाला आदमी है । कायरता के अनेक पहलू होते हैं, जैसे प्रेम के बारे में, देश के बारे में, जाति, धर्म आदि के बारे में । कृष्ण कुमार की इस कुण्ठा की अभिव्यक्ति बडबोले मनोहर, विचित्रताओं से भरे दीनेश्वर, लडाकू दीनानाथ, विचारशील कृपाशंकर और विसंगतियों से भरे गोरी चमडी के लडकों से दोस्ती गांठते मनमोहन की मित्रता से होती है । मित्रों के प्रभाव से एक-एक गुत्थी सुलझती जाती है और कृष्णकुमार "सूनी आजाद क्रान्तिकारी पार्टी" का संस्थापक

बन जाता है । कायरता टूट कर उसे एक सीमा से दूसरी सीमा में पहुँचाती है । कायरता से वह लड़ता है परन्तु उससे मुक्ति पाने की वैचारिक प्रक्रिया न होने से भटक जाता है । क्रान्ति के बचकाने मर्ज का वह शिकार होता है । वहाँ उसे इसी मनोवृत्ति के बलराम तिवारी जैसे लोग मिलते हैं तथा कुछ खूनी क्रान्ति सिखाने वाली पुस्तकें । कायरता और क्रान्ति का संघर्ष उसे तीसरी जगह ले आता है - प्यार की खोज की ओर । इस स्वाभाविक आकांक्षा को दबाकर वह आगे बढ गया था । प्रतिज्ञा की थी शादी न करने की । वह उर्मिला के संपर्क में आता है । दोनों का शारीरिक प्यार मानसिक प्यार में बदल जाता है । दोनों विवाह की प्रतिज्ञा करते हैं, पर अन्तर्जातीय विवाह की स्वीकृति इन्हें नहीं मिलती । यह प्रतिज्ञा भी टूठ जाती है । इस तरह कृष्णकुमार की दोनों प्रतिज्ञायें कायरता से संघर्ष और संघर्ष से विवाह की टूट जाती हैं । रचना का उपसंहार है कि आत्मालोचन के समय कृष्ण कुमार अपनी पुरानी जिन्दगी को उन्मादपूर्ण मानता है । कभी सहन शक्ति का उन्माद है तो कभी भावातिरेक का । उन्माद कभी भी सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया में पूरा साथ नहीं देता । कृष्णकुमार अन्ततः अपने भीतर से मार्क्सवादी विचारों के पास पहुँचता है ।

"ग्राम सेविका" नामक उपन्यास में कथा स्त्री की ओर से आरंभ होती है । दमयंती को अपनी किशोरावस्था में अतुल से मोह हुआ जिसे दोनों ने प्यार कहा । रूढिवादी मज़बूरियों के कारण मोहभंग हुआ, विवाह न हो सका, दमयंती ग्राम-सेविका बनी । बाद के जीवन में उसे एक बारमोह से निवृत होने का लाभ मिला, अतुल से छूटने की शिक्षा ने उसके जीवन को साहस, समझ और प्रेम की व्याख्या दी । अतत: वह गाँव के जीवन में सामाजिक रूपांतरण का कार्य करती बीच से अपनी भाँति मोह के कीचड से हरचरण को निकाल लाई । दोनों का विवाह हो गया ।

"कंटीली राह के फूल" के अनूप के सामने मधु और कामिनी लगभग आसपास ही आती है । अनूप शर्मीला खिलाडी, पढने में शिथिल प्यार करने के मामले में झिझकनेवाला किन्तु दूसरों से ईर्ष्यालु के रूप में प्रकट होता है । यह एक स्थिति है जहाँ इस रूढिवादी व्यक्तिवादी व्यवस्था ने मनुष्य को पैदा किया है । अनूप में सबसे बडी कमज़ोरी है शर्म के कारण, सोच और अभिव्यक्ति का फर्क । वह जो कहना चाहता है, कह नहीं पाता । शब्द उसका साथ नहीं देते । वह झूठ नहीं बोलता, क्योंकि अभिव्यक्ति की असमर्थता के कारण वह एकान्त में परेशान होता है । सोच और अभिव्यक्ति को एक स्तर पर लाने का ही काम पर उपन्यास करता है । उसके सामने मधु है जिसके लिए जिंदगी मस्ती, रोमांस, शान शौकत तथा शरीर भोग है । अनूप उसके साथ घूमता है, उसे खुली किताब के रूप में एकान्त में देखता है । पर उसके दिमाग में कामिनी का गंभीर समझदार सम्मानपूर्ण चेहरा है जिसमें प्रेम भीतरी तह से निकलता है वासना उसका हल्का संस्पर्श है । वह अनूप से प्यार करती है और अनूप भी उसे प्यार करता है । अनूप को शब्द धोखा देते हैं और अधिकार जताने में उसका स्वभाव आडे आता है । मधु और कामिनी के बीच अनूप का विकास कथा का कार्यक्रम है ।

कुल मिलाकर कह सकते हैं कि उपन्यासकार की हैसीयत से अमरकांत में "रोमान्टिक-ऐटीट्यूट" अधिक दिखाई देता है । जहाँ प्रेम, घृणा या ईर्ष्या की मनोवृत्तियों में उनके पात्र शरीक होते हैं, वहाँ ऐसा लगता है कि रचनाकार में बौद्धिक ठहराव आ गया है और उनकी रचना-प्रक्रिया उन्हीं स्थितियों में डूब जाना चाहती है । प्रेम के प्रसंगों में शरीर के तर्क से चेतना के तर्क का जो क्रमश= विकास मिलता है उनमें कुछेक स्थल ऐसे होते हैं जहाँ लेखक फैल जाता है । अपने आप से बेरूख होते या तटस्थ होने की वस्तुवादी प्रक्रिया छूटते छूटते रह जाती है ।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

अध्याय - तीन

अमरकान्त की कहानियों का वस्तु पक्ष

अमरकान्त की कहानियाँ ज़िन्दगी की खरी और बेलौस तस्वीर पेश करती हैं। अमरकान्त की कहानियाँ एक गहरे दायित्व-बोध के तहत लिखी गई कहानियाँ हैं, जिन्हें उनकी ज़िन्दगी की गहरी समझ और सामाजिक चेतना ने ऐतिहासिक सच्चाई दी है । वे यथार्थ का आभास नहीं देते यथार्थ को पुनरुज्जीवित करते हैं । इसलिए उनकी कहानियों में उन सारे पारिवारिक-सामाजिक संदर्भों की ऐतिहासिकता, समय और परिवेशगत सच्चाई मूर्त होती है जिसमें आदमी निरन्तर धूर्त, दयनीय, धोखेबाज, दंभी होता गया है और सिद्धान्त, मूल्य तथा आदर्श विपर्यस्त और ध्वस्त होते गए हैं ।

अमरकान्त की कहानियाँ यथार्थ की सही पहचान देती हैं । नकली स्थितियाँ, पात्र व मुद्राएँ नहीं, समय व परिवेश को उसकी वास्तविकता में मूर्त व परिभाषित करती है और सच्चाई की चुनौती के स्वीकार का साहस जगाती है । "आज़ादी के बाद आम आदमी की ज़िंदगी जिन-जिन मोडों मे गुज़रती रही है उसके सारे घुमाव अमरकान्त की कहानियों में साफ दिखाई पड़ते हैं ।[1]" वस्तु वैभिन्नय की दृष्टि से अमरकान्त की कहानियों पर निम्नलिखित उप-शीर्षकों के अन्तर्गत प्रकाश डाला जा रहा है:-

करुणा और विडम्बना की कहानियाँ

स्वतन्त्र भारत की प्रमुख स्थिति मोहभंग की रही है । यह मोहभंग वास्तव में विडम्बना ही है । देश की स्वतंत्रता पर यहाँ के लोगों ने हर तरह की प्रगति की कामना की, सुखी जीवन के स्वप्न देखे । पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया उनकी आशाओं - आकांक्षाओं पर भी पानी फिरता गया । राजनैतिक भ्रष्टाचार, मशीनीकरण आदि ने वर्तमान युग में ऐसी स्थितियाँ पैदा कर दी जहाँ मानव खुद अपने भाग्य का विधाता नहीं रह गया । यह एक प्रकार का सांस्कृतिक सामाजिक विघटन ही था जिसने मानव को करुण और विडम्बनात्मक स्थितियों की ओर धकेल दिया - "सांस्कृतिक संकट या मानवीय तत्व के विघटन की जो बात बहुधा उठायी जा रही है उसका तात्पर्य यही रहा है कि वर्तमान युग में ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न हो चुकी है जिसमें अपनी नियति के, इतिहास-निर्माण के सूत्र मनुष्य के हाथ से छूटे हुए लगते हैं - मनुष्य दिनों-दिन निरर्थकता की ओर

---

1. आज की कहानी - विजयमोहन सिंह, पृ.74

अग्रसर होता प्रतीत होता है । यह संकट केवल आर्थिक या राजनीतिक संकट नहीं है वरन् जीवन के सभी पक्षों में समान रूप से प्रतिफलित हो रहा है[1]।"

मोहभंग की इन्हीं विडम्बनाजन्य और कारुणिक स्थितियों का अंकन अमरकान्त ने अपनी कहानियों में किया है । अमरकान्त की सफलता का रहस्य उनकी सच्चाई, सादगी है । उन्होंने अपनी कहानियों की स्थितियों को जिन्दगी के बीच से चुना है । सीधी-सादी जीवन स्थितियों के बीच अमरकान्त ने विडंबना की गहरी रेखायें खींची हैं । एक ओर सामाजिक जीवन का तनाव और जीवन के कारुणिक क्षण भी बिंबित होते हैं ।

"डिप्टी कलक्टरी" नामक कहानी एक निम्न-मध्यवर्गीय परिवार की आशाओं - आकांक्षाओं की कहानी है । एक महीन डोर में बंधे हुए सपने बहुत जल्द बिखर जाते हैं और इस प्रकार उस पूरे परिवार की करुणा और विडम्बना उजागर हो जाती है । इस कहानी में परिवार का होनहार बेटा डिप्टी कलक्टर बनने मे रह जाता है । पर इस एक बातको कहने के लिए अमरकान्त ने जो वातावरण उपस्थित किया है, उसका दैन्य, उसकी क्षुद्रता अविस्मरणीय है । आर्थिक कसावट में पिसे जाते परिवार के मालिक बूढे मुख्तार शंकल दीप बाबू की सारी उम्मीदें अपने लड्के के डिप्टी कलक्टर होने पर हैं, लेकिन वह दूसरी बार भी फेल हो जाता है । इस कहानी का सारा विकास और उद्घाटन इतनी सहजता से होता है कि वह सीधे मर्म को बींध जाता है । उसके एक-एक चित्र में सजीवता है और बेपनाह विश्वसनीयता है । कहानी का सारा प्रयोजन इस शब्द-चित्र में

---

1. मानव मूल्य और साहित्य - धर्मवीर भारती, पृ.10

सुस्पष्ट होकर सामने आ जाता है - "वह धीरे से चोर की भाँति पैरों को दबाकर कमरे के अन्दर दाखिल हुए । उनके चेहरे पर अस्वाभाविक विश्वास की मुस्कराहट थिरक रही थी । वह मेज के पास पहुँच चुपचाप खड़े हो गए और अंधेरे में ही एक किताब उलटने-पलटने लगे । लगभग डेढ-दो मिनट तक वहीं उस तरह खड़े रहने पर वह सराहनीय फूर्ती से घूमकर नीचे बैठ गये और झुककर चारपाई के पास चले गये और चारपाई के नीचे झाँक-झाँककर देखने लगे, जैसे कोई चीज़ खोज रहे हों[1]।" इस शब्दचित्र का प्रभाव इतना गहरा है कि वह मन की गहराइयों को छू लेता है । अमरकान्त की यही विशेषता है - निर्मम सत्य से आँखें न चुराना । राजेन्द्र यादव का यह कथन इस संदर्भ में सार्थक लगता है - "बाप की आकांक्षाएँ, आशाएँ, मजबूरियाँ, प्यार, जिम्मेदारी की भावना और झल्लाहट इन सारी एक दूसरी से गुंथी जटिल भावनाओं का चित्रण लेखक जैसे सरल-सीधे ढंग से "डिप्टी कलक्टरी" में कहता गया है, इतनी आयासहीन सादगी से किसी देशी-विदेशी लेखक ने किया, मुझे याद नहीं है[2]।"

अमरकान्त की एक अन्य कहानी "दोपहर का भोजन" में सीधे-सपाट घटना क्रम द्वारा एक गृहस्वामिनी, सिद्धेश्वरी के भय और दु:ख की गहराई को प्रस्तुत किया गया है । वह आज के निम्न मध्यवर्गीय परिवार की जीवनचर्या के मूल में प्रवाहित भय और दु:ख की वह अन्तर्धारा है, जिसमें बहते हुए अनगिनत परिवारों के असंख्य प्राणी, वर्तमान के अभावों से पूरी तरह कटे, एक दूसरे से अपरिचित, आशंकित, भविष्य को लेकर दहशत से भरे न केवल पारिवारिक स्तर पर बिखरते बल्कि सामाजिक स्तर पर भावात्मक

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.28-29
2. राजेन्द्र यादव - कहानी - स्वरूप और संवेदना, पृ. 202

दृष्टि से टूटते संबंध-सूत्रों को संदर्भित करते हैं । परम्परा प्राप्त भावात्मक संबंध-सूत्रों और उनके माध्यम से बिखरने को आ रहे ढाँचे को कायम रखने की एक निष्फल दयनीय चेष्टा पूरे संदर्भ को बेहद कारुणिक बना जाती है ।

मानवीय संवेदना के भिन्न धरातल पर सृजित "मूस" कहानी में भी करुणा और विडम्बना के दर्शन होते हैं । परबतिया मुनरी को अपनी सुख-सुविधा के लिए इस्तेमाल करती है । वह बर्हिमुखी ज़रूरत से इतनी ज्यादा जुड जाती है कि अपना पत्नीत्व का अधिकार भी दे देती है ..... कुछ समय के लिए हीनता की भावना से भरा "मूस" का जीवन भी व्यवस्थित हो जाता है लेकिन मुनरी ज्यादा देर तक उस घर में रुक नहीं पाती - वह मूस और परबतिया की प्रताडना पाकर पास के बिसन के पास बैठ जाती है । इस कहानी में मानवीय करुणा का प्रसार जिन स्थितियों के माध्यम से किया गया है वे अत्यंत प्रभावित करती हैं ।

"फर्क" नामक कहानी में अमरकान्त समाज की विडम्बनात्मक स्थिति की ओर इशारा करते हैं । इस कहानी में चौदह-पन्द्रह बरस के एक मरियल से लड़के को भीड़ मारपीट कर थाने लाती है और छोटी-मोटी चोरी की कहानी को झूठ मानकर शंका और संदेह से चिल्लाती है । लेकिन तभी चार सिपाहियों से घिरा, बन्दूकों के बीच बिठाया गया, छः फुटा डाकू इक्के से उतरता है और तब उस मरियल से लड़के को एकदम भूल लोग उसकी प्रशंसा और सराहना में लीन हो जाते हैं - उसके द्वारा किये गये झूठे - सच्चे कत्लों से लेकर उसकी प्रेमिकाओं तक । लोग यह भी कहते हैं कि डाकू होने के बावजूद वह गरीबों का मददगार है और भले

घर की औरतों की ओर तो वह आँख उठाकर भी नहीं देखता । यहाँ तक कि लोग उसके गाँव की जानकारी और उसके निजी परिचय के दावे में भी गुरेज़ नहीं करते । स्थिति की विडम्बना यह है कि एक डकैती में पाँच कत्ल करके बीस हज़ार की सम्पत्ति लूटने वाला समाज की नज़रों में सराहना और साधुवाद का पात्र है जबकि भूख की असह यातना से लाचर वह लड़का जो मौका लगने पर किसी घर में घुस कर चार पराठे चुराकर एक गिलास दूध पी आता है, या एकाध कपडा या छोटा-मोटा बर्तन उठा कर ले जाता है जिसे बेचकर एक जून की रोटी खा सके वह एक भयंकर अपराधी और घृणित जीव है ..... "वे देर तक मैदान में खड़े इसी तरह बातें करते रहे । वे लड़के को बिलकुल भूल चुके थे । कभी वे मुस्करा उठते और कभी हँस पडते । फिर वे गम्भीर होकर डाकू की ओर सम्मान और प्रशंसा की दृष्टि से देखने लगते ।" यह फर्क सिर्फ उन दो चोरों का नहीं बल्कि हमारी मानसिकता का है । प्रतिक्रियाविहीन सामाजिक स्थिति से उद्भूत वर्गीक मानसिकता का यही उदाहरण है ।

"असमर्थ हिलता हाथ" में एक लक्ष्मी साहस के अभाव में जाति और कर्म के सामने घुटने टेककर अनचाहे व्यक्ति से शादी कर लेती है और शादी के बाद इसी जाति और धर्म का सहारा लेकर दूसरों की भावनाओं को कुचलने लगती है । सभी के प्रति घृणा, ईर्ष्या भाव के कारण वह किसी का सुख बरदाश्त नहीं कर पाती, यहाँ तक कि अपनी लड़की मीना का भी, जिसके आचरण में उसे अपनी "आडम्बर" युक्त सत्ता को एक "पवित्र सरल आत्मा की चुनौती" दिखाई पड़ती है । लेकिन जीवन की आखिरी मंजिल पर जब वह जीवन की सच्चाई का साक्षात् करती है तो उसे अपनी पुत्री

---

1. अमरकांत की कहानियाँ भाग - 1, पृ.155

मीना की मुख्याकृति में "एक पवित्र और निर्दोष जीवन की निष्फलता का दर्शन होता है और अपनी असमर्थ असहायावस्था में वह मीना की "सरल आत्मा की चुनौती" से पराजय मानकर उसे सरल-निश्छल दिल से प्यार करना चाहती है और मीना को यह बता देना चाहती है कि उसको अपनी आत्मा की रोशनी के अनुसार अपना रास्ता चुनना चाहिये तथा यह कि कायरता ज़िन्दगी को झूठा बना देती है । वह कामना करती है कि मीना ज़िन्दगी में झूठ के पीछे न भागे बल्कि सत्य को साहस के साथ ग्रहण कर वास्तविक सुख और आनन्द प्राप्त करे । स्पष्ट है उसने मीना के अपने प्रेमी के साथ प्रस्तावित जिस विवाह का विरोध किया था उसे स्वीकार कर लेती है । उसका यह स्वीकार वस्तुत: हृदय परिवर्तन पर आधारित न होकर जीवन की सच्चाई की समझ पर आधारित है जिसमें मानवीय भावनाओं का सहज समर्थन भी है । लेकिन पंगुता की स्थितिमें स्वस्ति में उठा हुआ उसका "असमर्थ हिलता हाथ" वर्जना के हाथ में आयायित होकर व्यवस्था के उस विडम्बनात्मक चरित्र को उभारता है जो अपने निर्मम अनुशासन में आदमी को इतना विचार तथा संवेदनाहीन बना देता है कि वह किसी भी संकेत को मानवीय भावनाओं के समर्थन में अर्थापित करने के बजाय उसे पालतू जानवर बनाने वाले अर्थ में ही लेने को विवश होता है ।

व्यंग्य के नए आयाम

व्यंग्य कहानियों की एक परम्परा हिन्दी कहानी में बराबर रही है । नई कहानी के दौर में हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य-कहानियों की परंपरा को पुनरुज्जीवित किया है । लेकिन फिर भी परसाई की कहानियों में हास्य का पुट अधिक है । इसलिए व्यंग्य का सशक्त रूप प्राप्त नहीं होता है । पर अमरकान्त जैसे लेखकों ने व्यंग्य का उस अर्थ और रूप में इस्तेमाल नहीं किया है । अमरकांत अपनी कहानियों में जीवन से सुना और सीधा साक्षात्कार करते हैं इसीलिए "उनकी कहानियों में बहुधा ही व्यंग्य की एक प्रच्छन्न अन्तर्धारा प्रवाहित रहती है जो पूरी व्यवस्था को ही छूती और छीलती है ।"[1]

---

1. अमरकान्त वर्ष । - मधुरेश का लेख, पृ.153

अपनी कहानियों में अमरकान्त अपने पात्रों की असफलताओं और अन्तर्विरोधों के प्रति गहरा व्यंग्य ही नहीं करते बल्कि उन सबके प्रति एक गहरी मानवीय करुणा भी उनकी कहानियों में होती है - यह करुणा किसी छिछली सहानुभूति के रूप में या उनकी असफलताओं तथा दुर्बलताओं का औचित्य सिद्ध करने में नहीं होती बल्कि मनुष्य की बुनियादी दुर्बलताओं, असफलताओं के प्रति एक अन्तर्निहित सम्मान की भावना के रूप में व्यक्त होती है - इसीलिए यह भावना कभी कहानी की अभिव्यक्तियों में शामिल नहीं होती, बल्कि उसके केन्द्रभूत अर्थसंकेत में निहित होती है । फिलहाल यह कहना ठीक लगता है कि अमरकान्त की कहानियों का मूलभूत गुण ही यह गहरी मानवीय करुणा है - जो विविध रूप से उनके अत्यंत सहज लगनेवाले व्यंग्यों के माध्यम से व्यक्त होती है ।

अमरकान्त की इन व्यंग्यपरक कहानियों में नेता भी हैं और अफसर भी, एक पत्नी के सहारे ही दूसरी पत्नी पाकर उसकी कमाई पर जीनेवाले परजीवी है और एकदम कुछ न करके भी बहुत कुछ करने का भ्रम पालने और पैदा करनेवाले आकाशचारी किस्म के लोग भी है जिनकी संख्या हमारी वर्तमान व्यवस्था में तेजी से बढती गई है । इन कहानियों में ऐसे लोग भी हैं जिनके अतीत के अंधेरे में खिला उनके गुनाहों का पलाश महकता है और जो कोरमकोर दुनियादारी में डूबे रह कर भी जीवन से अपने विलगाव और उसकी निःसारता की दार्शनिक बातें कर सकते हैं । इन कहानियों में हमारी व्यवस्था के द्वारा पैदा किये गए ऐसे नवयुवक भी हैं जिनकी सारी मानवीय सद्प्रवृत्तियाँ सुप्त कर दी जा चुकी हैं और जो बिना लाभ या स्वार्थ के, मच्छर या भुनगे के जीवन की तरह ही महज़ खिलवाड में दूसरों के जीवन को मसल दे सकते हैं । इस व्यवस्था ने अपने हित में उनका उपयोग करके न सिर्फ यह कि उनकी अपनी निगाह में उनके महत्व को बढा दिया है बल्कि देश, राजनीति और ऐसे ही दूसरे व्यापक संदर्भों में इस्तेमाल की

जाने वाली शब्दावली और उछाने जानेवाले नारों को वे अपने निजी संदर्भों में भी दोहराते और लागू कर सकनेवाली धूर्तता से लैस है । इन और इन जैसी दूसरी सैकडों विसंगतियों के उद्घाटन के लिये अमरकान्त अपनी कहानियों में व्यंग्य का बडा रचनात्मक और सक्षम उपयोग करते दिखाई देते हैं ।

"पलाश के फूल" के राम नवल किशोर अपने एक मित्र को अपनी जवानी की कहानी सुनाते हैं कि जमींदारी के दिनों में कैसे तरह-तरह के मजे किये, घर-गृहस्थी छोडकर ज़मींदारी में पडे रहते थे और जिसकी बहू बेटी को चाहा उठवा लिया, किसकी मजाल थी जो उनके सामने आता और उनका विरोध करता । ऐसा ही एक बार 15-16 वर्ष की अंजोरिया के साथ भी हुआ । उस पर नज़र पडते ही उसके बाप भुलई को बेतरह पिटवा दिया गया और बाद में उसके प्रति हमदर्दी के छद्म में उसके घर तक पहुँच और लडकी को काम के बहाने अपने घर तक बुला लेने की साजिश । बाद में वही अंजोरिया दो-तीन साल तक उनकी पालतू बकरी की तरह रहती है, उनके प्यार के इस नाटक में इतनी बुरी तरह डूब जाती है कि अपनी ससुराल जाने को मना कर देती है और एक दिन उनसे प्रस्ताव करती है कि वह उसे भगाकर ले चलें और शहर में मकान लेकर उसे एक रखैल की तरह रख लें क्योंकि यहाँ गाँववाले उसे बोली-ताने से परेशान करने लगे हैं । फिर वह अपने श्रोता मित्र को सम्बोधन करते हुए कहते हैं..... "भैया ऐसा लगा कि दिमाग में एक रोशनी जल उठी है । सब कुछ साफ होता गया । मेरे अन्दर कोई कह रहा था, नवल किशोर, तुम आज तक शैतान के चक्कर में रहे, वही शैतान तुम्हारी इज्जत, ज़मीन-जायदाद, बाल-बच्चे, सभी कुछ छीनकर तुम्हें बरबाद करना चाहता है । ..... और बात सच्च थी । एक ब्याहता औरत में ऐसी ईमानदारी और लगाव का कारण क्या हो सकता है

उसने पहले अपने रूप के जादू से मुझे वश में किया और फिर अपना प्यार जताकर मुझे उल्लू बनाती रही, मेरा रूपया-पैसा बरबाद करती रही ..... माया का असली रूप यही देख सकते हो । ..... तो मैं ज्यों का त्यों सोचता गया, मुझमें उस औरत के लिए नफरत सी भरती गई । मैं देर तक पश्चाताप की आग में जलता रहा और रोता रहा .... ।" इस कहानी में लेखक ने व्यंग्य के सहारे दो परस्पर विरोधी जीवन मूल्यों के द्वन्द्व को उभारा है साथ ही वह उस ढोंग और छद्म की ओर भी संकेत करना चाहता है जो रामनवल किशोर जैसे लोगों की सबसे बडी पूँजी है और समाज में उनका सारा व्यापार उसीके सहारे चलता है । सारे तथाकथित पश्चाताप और मोहमुक्ति के बावजूद जमींदारी की समाप्ति पर उन्होंने भाग दौड करके काफी ज़मीन खुंदकाश्त करवा ली है छोटे लड़के को आवरगी से उठाकर ठेकेदारी में डाल दिया है और अब वह [illegible] हज़ारों पीटता है और बडा लड़का बनारस कमिश्नरी में वकील है । गाँव में आटा की चक्की और चीनी का कारखाना खुल गया है और पिछले साल वह गाँव पंचायत के सभापति भी हो गये हैं । लेकिन इन सारी महत्ती उपलब्धियों से निर्विकार रहकर वे कहते यही हैं ..... "पर सच कहता हूँ, मुझे किसी से कोई मतलब नहीं । भैया, इस जीवन में कोई सार नहीं ....।"[2]

"बस्ती" नामक कहानी में अमरकान्त ने राजनीतिक विकल्पहीनता, अनास्था को व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है । सीधा-सादा, सीलन भरे बदबूदार कमरे में रहने वाला "आत्मानंद" नेता रामलाल की ओजपूर्ण और योजनापूर्ण भाषा पर विश्वास कर लेता है और अपने जैसे लोगों के

---

1. देश के लोग - अमरकान्त, पृ.103
2. वही, पृ.104

उद्धार का रास्ता उसे रामलाल जी के बताए रास्ते पर चलने में ही नज़र आता है । आदर्श बस्ती के निर्माण के लिए आंदोलन होता है । आत्मानंद इस आंदोलन में तन मन से समर्पित हो जाता है । बस्ती बनती है । कुछ समय के जलसों और समारोहों की उत्तेजना के बाद बस्ती के दक्षिण की गली से ईंटें उखाड़कर गायब कर दी जाती हैं । पता चलता है कि इन ईंटों से रामलाल जी का गुसलखाना बन रहा है । नया नेता बांकेलाल इस चोरी का भंडाफोड करता है । आत्मानंद के विश्वासों की धरती दरक जाती है । ग्लानि और शोक में डूबा हुआ वह बांकेलाल के साथ हो जाता है । उसके लिए रामलाल का विकल्प बांकेलाल है । बाद में बस्ती की नालियों से लोहे की जालियों और मेनहोल के ढक्कन की चोरी में आधी रात में लगे हुए बांकेलाल को वह अपनी आंखों से देखता है । "कभी वह क्रोध, घृणा और विद्रोह की भावना से कांपने लगता । कभी ईर्ष्या एवं महत्वाकांक्षाओं की लहरों पर झूलने लगता । कभी व्यर्थता और उदासीनता से ग्रस्त । कभी-कभी उसके सामने कई विचार और रास्ते उभर आते लेकिन उसकी समझ में नहीं आता कि सत्य क्या है । आखिर सत्य क्या है ।" इस कहानी में व्यंग्य की दो सशक्त धारायें हैं । एक ओर आत्मानन्द के विरुद्ध दीनता को लेकर है, दूसरी ओर राजनीतिक जीवन में व्यापी हुई अनास्था को लेकर ।

"हत्यारे" शीर्षक कहानी में अमरकान्त ने व्यंग्यात्मक ढंग से हमारी व्यवस्था द्वारा पैदा किये गये ऐसे नवयुवकों का चित्रण किया है जो सम्पूर्ण मानवीय विवेक, निर्णय क्षमता और जीवन मूल्यों के हत्यारे हैं ।

---

1. मित्र मिलन तथा अन्य कहानियां - अमरकान्त, पृ.35

इनकी सारी सद्प्रवृत्तियाँ इस कदर लुप्त हो चुकी है कि वे देश, राजनीति और ऐसे ही दूसरे व्यापक संदर्भों में इस्तेमाल की जानेवाली शब्दावली और उछाले जानेवाले नारों को अपने निजी संदर्भों में दोहराते हैं और उन्हें लागू कर सकनेवाली धूर्तता से युक्त हैं - "नेहरू देश के और सभी नेताओं को निकम्मा और बातूनी समझता है । तुमको तो मालूम है न कि लास्ट टाइम जब मैं दिल्ली गया था तो नेहरू ने अशोक होटल में आकर मुझसे मुलाकात की थी ?"[1]

इस प्रकार आधुनिकता के नाम पर होनेवाली अराजकता को व्यंग्यात्मक स्वर में "हत्यारे" कहानी प्रस्तुत करती है ।

"संत तुलसीदास और सोलहवाँ साल" में गाँव का एक युवक इन्टरमीडिएट फेल होता है और तब तक उसकी शादी हो चुकी होती है । पत्नी उसे अपनी ओर खींचती है और पढाई अपनी ओर । बहुत ज़ोर लगाकर दूसरे साल वह सन्यास जैसे ले तो लेता है परन्तु पत्नी के पत्र उसे इस प्रकार तोड देते हैं कि कुल मिलाकर स्थिति हमारे समाज की घोर पतनशील स्थिति पर व्यंग्य हो जाती है ।

"सेवा रुपये" शीर्षक कहानी में बीसवीं शताब्दी का एक गाँव है जिसके भीतर से कथाकार एक सशक्त रेखाचित्र उभारता है । गाँव में एक बाबा है । वे गाँव की सरल-साधु पीढी के प्रतिनिधि है । वे हर बात पर बारम्बार रोते हैं, कि कलयुग आ गया है । एक ओर तो जीवन की

---

1. मौत का नगर - अमरकान्त, पृ.97

नयी-नयी कठिनाइयाँ तो रोज बढ़ती जा रही है और दूसरी ओर वे बाबा हैं जिन्हें नये युग के प्रति कोई शिकायत नहीं होती है और इन्हीं दो विरोधाभासों के बीच व्यंग्य के रूप में जो कहानी उभरती है वह बहुत मार्मिक होती है ।

"जनमार्गी" भी एक ज़ोरदार व्यंग्य रचना है । वह कवि है, क्रान्तिकारी है, फटेहाल दरिद्र कम्पोजिटर है और जब वह अपनी प्रेमिका की याद में मर जाता है तो पाठकों के भीतर एक सवाल गूँजने लगता है कि गुमनाम मौत ही "जनमार्गी" की नियति है ?

"म्यान की दो तलवारें" ऊपरी तौर पर दो स्थानीय कवियों के टुच्चे विरोध और अर्थहीन स्पर्धा की कहानी लग सकती है लेकिन इस कहानी का सरोकार इससे भिन्न ही नहीं, कहीं अधिक गहरा भी है । इस कहानी के धरातल के माध्यम से अमरकान्त यह संकेत करना चाहते हैं कि लोगों की इस आपसी लडाई से व्यवस्था कैसे लाभ उठाती है और यह भी कि विवेकहीन किस्म की यह आपसी लडाई कैसे उसके हाथ मजबूत करती है वेतन वृद्धि के नोटिस के उत्तर में उनके काम के घंटों को बढा दिया जाता है । "विकल" और "मदमस्त" की आपसी लडाई और स्पर्धा ने उनका विवेक इस सीमा तक कुंठित कर दिया है कि भले-बुरे का निर्णय लिये बिना वे हमेशा एक दूसरे के विरोध में ही कदम उठाते हैं । "विकल" को नीचा दिखाने केलिए ही "मदमस्त" प्रबन्धकों की चापलूसी के लिये अपने को तैयार करता है लेकिन ऐन वक्त पर वह कुछ ना कुछ कर बैठता है । प्रबन्धकों को दिये गए विरोध पत्र में चूंकि उसका भी नाम है, झूठे आरोप लगाकर उसे मुअत्तिल करने की धमकी दी जाती है । वह सोचता था कि चूंकि वह प्रबन्धकों की चापलूसी के लिए अपने को तैयार करता रहा है, उसको कोई कुछ नहीं कहेगा । लेकिन जो होना है वह उसकी योजना और सोच के

बिना भी होता है । अनजाने ही उसमें विवेक भरी अकड पैदा होती है और वह विरोध पत्र से अपना नाम वापस लेने से इन्कार कर देता है और कम से कम थोडी देर के लिए ही यही "टिकल" के विरोध की बात एकदम उसके दिमाग से उतर जाती है ....."आदेश को लेकर राजशेखर "मदमस्त" मूर्ख की तरह देखता हुआ बाहर चला गया । उसके दिल की सबसे बडी तमन्ना दिल में ही रह गई थी । उसे अपने से ऐसी उम्मीद नहीं थी । ....." लेकिन अपनी उम्मीदों के विरोध में उसके जाने का संकेत एक महत्वपूर्ण स्थिति की ओर इशारा करता है । स्पष्ट है कि उसने सही और वास्तविक विरोध की जगह को पहचान लिया है ।

"सप्ताहांत" ऐसे व्यक्ति स्वभाव की दिलचस्प व्यंग्यात्मक कहानी है जो छोटी-छोटी ज़रूरतों के तर्क से सम्पर्क में आये हर व्यक्ति को छलता चला जाता है और अंत में लाटरी के प्रलोभन में उन्हीं से ऐसा मूर्ख बनाया जाता है जो उसकी शक्ति को कई-कई दिनों केलिए खत्म कर जाता है ।

"काली छाया" का व्यंग्यात्मक पहेलू यह है कि जो अज्ञात युवक रात में चोर समझा जाकर अपमानित होता है और पिटता है वही दिन के उजाले में प्रताडित करनेवाले व्यक्तियों की सहज सहानुभूति का पात्र हो जाता है ।

निम्न मध्यवर्गीय मानसिकता की कहानियाँ

अमरकान्त की कहानियों का संसार निम्न मध्यवर्ग या निम्न मध्यवर्गीय मानसिकता का संसार है । इस अर्थ में यह एक सीमित संसार है ।

---

1. देश के लोग - अमरकान्त, पृ.125

पर इस संसार को जितनी गहराई और विविधता से उन्होंने देखा है, उतना अन्य किसी कहानीकार ने नहीं । उन्होंने अपनी कहानियों की वस्तु और कथ्य को निम्न मध्यवर्ग के साधारण जीवन में से उठाया है । "प्रेमचन्द के बाद साधारण जीवन के कथ्य पर ऐसा सहज अधिकार अमरकान्त में ही मिलता है ।" इस वर्ग के स्वभाव का, इसके पाखंडों और धूर्तताओं का, इसके टुच्चेपन और कमीनेपन का, इसकी विसंगतियों और विडम्बनाओं का बडी सटीक और यथार्थपरक चित्रण अमरकान्त की कहानियों में मिलता है ।

अमरकान्त की अधिकांशक हानियाँ निम्नमध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक अभावग्रस्तता व तनाव को रेखांकित करती है । उनकी कहानियाँ इस वर्ग के टूटते जीवन को बारीकियों से उकेरती है और टूटन के प्रति समझदार सवाल उठाती है । वे निम्नमध्यवर्गीय पात्रों और इन्हीं के यहाँ या मध्यवर्ग के यहाँ नौकरीरत निम्नवर्ग की करुण स्थितियों को उजागर करते हैं । इस वर्ग के जीवन के बारीक से बारीक पक्ष की समझ उन्हें है जिस कारण इन पात्रों का यथार्थ विश्वसनीय बन पडा है । यह वर्ग आज़ादी-पूर्व सरकारी या बडे सामंतों के यहाँ कार्यरत था, तब उसका जीवन आज की अपेक्षा सुखमय था । आज़ादी के बाद यह वर्ग नौकरशाही का पोषक तो अवश्य रहा लेकिन राष्ट्रीय प्रक्रिया से अलग रह सामाजिक क्रियाशीलता के प्रति उदास होकर पारिवारिक गाडी में जुते बैल सा हाँफता हुआ "लीक" पर चलता रहा । अब यह वर्ग निराशा और हताशा में जीने का अभ्यस्त हो चुका है । इसी वर्ग की निराशाओं और हताशाओं को अमरकान्त ने अपनी कहानियों में उभारा है । अमरकान्त की कहानियाँ

---

1. अमरकान्त की : सुरेन्द्र चौधरी का लेख पृ. 265

निम्न मध्यवर्गीय परिवार के भीतरी तनावों की कहानियाँ हैं । "रामकुमार और निर्मल वर्मा की कहानियों में जहाँ अपने अतीत के प्रति मोह या अपराधबोध है - कुछ न होने या कुछ न कर गुजरने से उत्पन्न दर्द है वहाँ अमरकान्त की कहानियों में न अतीत का मोह है और न भविष्य की रंगीन आशा है, बल्कि उनकी कहानियाँ वर्तमान जटिलता के प्रति एक समझदार सवाल है ।"[1]

अमरकान्त के निम्नमध्यवर्ग के लगभग सभी पात्र जीवन-यापन केलिए बाबू-गिरी करते नजर आते हैं । इस वर्ग की कमज़ोरियों, आदतों और थोथी संभ्रान्तता की बारिकियों को पकडने तथा उनकी उच्च वर्गीय मानसिकता को पहचानने में वे अद्भुत रूप से सफल हुए हैं । बढते पूंजीवादी शिकंजे से बचने के लिये यह वर्ग सुनहले भविष्य के सपने देखता है जबकि यह निश्चित है कि जिसका वर्तमान नहीं उसका भविष्य क्या होगा । रूपये के अवमूल्यन और बढती मँहगाई - बेकारी से इन पात्रों का टूटते जाना ही इनकी नियति है । "डिप्टी कलक्टरी" के शकलदीप बाबू नारायण के डिप्टी कलक्टर हो जाने से समाज में बढती प्रतिष्ठा के प्रति आश्वस्त हैं, आशावान हैं । उनकी यह आशा झूठी है क्योंकि वे जानते हैं कि जो बी.ए. थर्ड क्लास में पास हुआ है, क्लर्की के लिए नहीं चुना जा सका, वह डिप्टी कलक्टर कैसे हो सकता है । फिर भी न जाने किस उम्मीद से छः सौ रूपया कर्ज लेकर नारायण की इस पढाई व परीक्षा में खर्च करते हैं, जब कि जमुना के आग्रह पर ही वे "काव्ह कुकुर" की तरह चिल्लाते हैं - "मैं तो हैरान परेशान हो गया हूँ । तुम लोग मेरी जान लेने पर तुले हुये हो ।"[2] नारायण के न चुने जाने पर भी वे निराशा नहीं होते, जबकि नारायण का तीसरा और अंतिम अवसर था ।

---

1. आधुनिक हिन्दी कहानी - गंगाप्रसाद विमल, पृ.135
2. मौत का नगर - अमरकान्त, पृ.52

"दोपहर का भोजन" शीर्षक कहानी में अमरकान्त ने एक निम्नमध्यवर्गीय परिवार की गरीबी की दर्दनाक स्थिति का खुलासा दिया है, साथ ही उनकी मानसिकता को भी उकेरा है । सिद्धेश्वरी दोपहर का भोजन बना कर बैठी है । बारी-बारी से उसके बडे-छोटे बेटे और पति खाना खाने आते हैं । सिद्धेश्वरी सबसे आग्रह करती है कि वे एक रोटी और ले लें किन्तु सभी जानते हैं कि उनके हिस्से केवल दो रोटियाँ आती है, तीसरी रोटी का अर्थ है दूसरे का भोजन छीनना । सभी पेट भरा होने का बहाना बनाकर दो-दो रोटियाँ खाकर उठ जाते हैं । पढे-लिखे बडे पुत्र और डेढ महीना पूर्व नौकरी से हटे हुए पति के परिवार में और क्या हो सकता है । "सारा घर मक्खियों से भनभना कर रहा था ।"[1] इस संदर्भ में डॉ॰ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय का यह कथन सार्थक लगता है कि "सिद्धेश्वरी की मन:स्थिति एक मथकर रह जानेवाली दयनीयता का संकेत करती है और वह दोपहर का भोजन उसी स्थिति के असंख्य भारतीय परिवारों में होने वाले भोजन का प्रतीक बन जाता है ।"[2]

"जिन्दगी और जोंक" नामक कहानी में शिवनाथ बाबू तथा सारा निम्न मध्यवर्ग रजुआ का शोषण करता है । कहानी के प्रारंभ में शिवनाथ बाबू रजुआ पर साडी की चोरी करने का आरोप लगाते हैं, उसे गालि देते हैं और पीटते हैं । जिस साडी को चुराने का आरोप रजुआ पर लगाया जाता है, जब वह घर ही में मिल जाती है तो शिवनाथ बाबू खिसिया तो ज़रूर जाते हैं पर अपनी मूल शोषक प्रवृत्ति को बेधडक होकर कहने में उन्हें ज़रा भी संकोच नहीं होता । नेरेटर के पास आकर वे खैंपते हुए बोलते हैं -

---

1· मौत का नगर, पृ॰17।

2· आधुनिक कहानी का परिपार्श्व, पृ॰14।

"इस बार तो साडी घर में ही मिल गई है, पर कोई बात नहीं, चमार-सियार डाँट-डपट पाते ही रहते हैं । अरे, इस पर क्या पड़ी है । चोर चोई तो रात-रात भर मार खाते हैं और कुछ नहीं बताते ।" फिर बाई आँख को खूबी से दबाते हुए दाँत खोलकर हंस पडे : "चलिए साहब, नीच और नींबू को दबाने से ही रस निकलता है[1] ।"

नीच और नींबू को दबाने की यह प्रवृत्ति केवल शिवनाथ बाबू की ही नहीं है, पूरे मोहल्ले की है । यह सम्पूर्ण निम्न मध्यवर्ग के छद्म और टुच्ची नैतिकता को उघाड़कर रख देता है ।

इसी कहानी में एक जगह शिवनाथ बाबू रजुआ की दयनीय स्थिति पर कहते हैं "गरीबों को देखकर मुझे भी दया - माया सताती है, पर अपना भी तो देखना है[2] ।" यह कथन निम्न मध्यवर्ग की छद्म नैतिकता को उघाड कर रख देता है । यह दया-ममता नहीं, दया-ममता का दिखावा है । नैतिक मूल्यों की दुहाई देनेवाला यह वर्ग अपने व्यवहार में कितना अनैतिक और अमानवीय है, यह इस कथन से स्पष्ट हो जाता है ।

"गले की जंजीर" बडी मामूली सी घटना को लेकर लिखी गई कहानी है, जिसमें न तो कोई गहरा अर्थ है और न ही किसी किस्म की श्लिष्टता । इस कहानी में एक आदमी की जंजीर रात में खुले में सोये हुए उसके गले से गायब हो जाती है - और भी दिक्कत यह है कि वह भी

---

1. मौत का नगर, पृ.19।
2. वही, पृ.210

अपनी न होकर उसके एक मित्र की थी जिसे उसने अपने निम्न मध्यवर्गीय अभावों के एक अन्तहीन सिलसिले के बीच महज शौक में आकर गले में डाल लिया था । इस जंजीर की चोरी की सूचना के आधार पर ही कहानी विकसित होती है । जो भी सुनता है वह उसे इस बात के लिये दोषी ठहराता है कि जंजीर यहाँ न होकर कहाँ क्यों थी और वह लोगों से जहाँ-तहाँ उसके सुरक्षित रह सकने की बाबत सुनाता है, हर अगले आदमी को उसी जगह उसके होने की बात बताता है लेकिन लोग हैं कि उसे चैन नहीं लेने देते । अन्त में एक ठाकुर साहब उसके भोलेपन अर्थात् मूर्खता पर तरस खाकर उसकी नासमझी पर हँसते हैं और बडे राज के स्वर में कहते हैं कि उसकी सबसे सुरक्षित जगह उसका गला ही था और अब वह यह कहने और बताने की स्थिति में नहीं है कि दरअसल वहीं से तो वह चोरी हुई है । इस कहानी में अमरकान्त बडे सहज रूप से इस तथ्य को अंकित करने की कोशिश करते हैं कि जिसकी चीज़ जाती है अंत में वहीं बेवकूफ बनता है और लोग हैं कि अपनी अक्ल और हर स्थिति के लिए तैयार शुदा सुझावों का कोश निर्ममता से लुटाते घूमते हैं । इस तरह एक छोटे बेहद मामूली घटना के माध्यम से निम्न मध्यवर्गीय सोच और मानसिकता को अंकित किया गया है ।

इसी तरह "नौकर" में वकील साहब को घरेलू नौकर जंतु, जो उस परिवार में सचमुच ही एक जंतु की हैसियत रखता है, एक माध्यम मात्र है । लेखक का वास्तविक उद्देश्य नौकर को लेकर निम्न मध्यवर्गीय ओछेपन और टुच्ची मनोवृत्ति को रेखांकित करना है । इस कहानी में नौकर को लेकर तो यह मानसिकता प्रगट होती है - रहन-सहन और निम्न मध्यवर्गीय तौर-तरीकों पर भी इससे पर्याप्त रोशनी पड़ती है .... "इन जलपात यात्राओं को बीच और भी अधरम सधरम काम करने होते । मसलन कभी एक आने की हींग, कभी दो पैसे का नमक, कभी दो आने दस पैसे की लकडी

और कभी चार आने की थी । सामने वाले गुप्तजी के यहाँ से कभी दो गिलास आटा, कभी एक मुट्ठी चीनी और आध सेर मूँग या उडद की दाल लाना होता । राशन आने पर उतने ही लौटा दिये जायेंगे ..... ।" इस तरह नौकर के माध्यम से वकील परिवार की, और प्रकारान्तर से पूरे निम्न मध्यवर्गीय समाज की, पूरी दिनचर्या का अंकन इस कहानी में बडी सहजता और सादगी के साथ हुआ है ।

"मकान" का मनोहर उस वर्ग का प्रतिनिधि है जिसमें आनेवाले लोग निरन्तर उद्योग करते और असफल होते रहने की प्रक्रिया में मन और शरीर से इतने जर्जर हो जाते हैं कि किसी भी बात की तार्किक संगति नहीं बिठा पाते । दुर्दम जिजीविषा, असीम अनुराग और गहरी सूझ-बूझ के रहते हुए भी वे किसी मामले में संतुलन नहीं कायम कर पाते और भय, आतंक, क्रोध की विचारहीन आवेगात्मकता में टूट-टूट कर चुकते रहते हैं । मनोहर की समस्या आज के उस निम्नमध्यवर्गीय आदमी की समस्या है जो जीवनेच्छा से भरपूर, भावनाओं से सम्पन्न और सूझ-बूझ का धनी होते हुए भी इतना झकझोरा हुआ, आहत, असंतुलित और संतप्त है कि हर जगह शून्य का विस्तार पाता है । "घुंडमवार" नामक कहानी में भी अमरकान्त ने निम्न मध्यवर्गीय मानसिकता को उघाड कर सामने ला दिया है । "घुंडमवार" का पात्र अपनी जिस कमी को हफ्ते भर में जीत सकता था, उसके लिए दुनियाँ भर में घोडा दौडता-फिरता है । यह भी निम्न मध्यवर्ग की कमज़ोर मानसिकता का ही प्रमाण है ।

प्रबल जिजीविषा की कहानियाँ

अमरकान्त की कहानियों में मानवीय संवेदनशीलता है, जीवन का यथार्थ है और आस्था एवं संकल्प है । उनकी अधिकांश कहानियों में ऐसा प्रगतिशील दृष्टिकोण उभरता है जो जीवन से जूझने की एक नई प्रेरणा देता है और विषमताओं से ऊपर उठने का आत्मविश्वास देता है । इसीलिए अमरकान्त की इन कहानियों को प्रबल जिजीविषा की कहानियाँ कहा जा सकता है ।

"जिन्दगी और जोंक" कहानी की मूल संवेदना जीने के संघर्ष या जिजीविषा के भाव की व्यंजना में निहित है । जीने के संघर्ष को इस कहानी में जिस रूप में व्यक्त किया गया है वह किसी बौद्धिक आकांक्षा या दार्शनिक चिंतन का परिणाम नहीं है । यह सीधे-सादे भौतिक अर्थ में जीवन की बुनियादी ज़रूरतों के तहत ज़िन्दा रह पाने की जद्दो - जहद है । यह उन लोगों की कहानी है जो निर्धनता की रेखा के कहीं बहुत निचले स्तरों पर जी रहे हैं और इस तरह जीने केलिए भी जूझ रहे हैं क्योंकि मध्यवर्ग के सम्भ्रान्त लोग उनके उस स्तर पर जीने को भी निरन्तर तकलीफदेह बना देते हैं ।

यह कहानी उस गरीब आदमी की कहानी है जो कदम-कदम पर सताया जा रहा है उत्पीड़ित, शोषित और अपमानित हो रहा है उन लोगों के हाथ जो मानवीयता का, दया, माया, ममता और करुणा का दम भरते थकते नहीं । ऐसे लोगों के बीच बार-बार प्रताड़ित होने और प्रवंचना पाने के बावजूद वह जीने की कोशिश करता है - निहायत सादगी से,

कभी पगली के साथ हमदर्दी के भाव में बंधकर, कभी मोहल्ले की छोटी जाति की औरतों से भौजाई का नाता जोड़कर, कभी मोहल्लेवालों के छोटे-छोटे काम करके और कभी-कभी रज्जु भंगत बनकर । पर सभी उसे दुतकारते हैं । हैजा हो जाने पर वह खंडहर में बेहोश पड़ा रहता है । उसकी हालत देखकर सबकी राय थी कि रजुआ बच नहीं सकता, पर वह मरा नहीं । उसके बच जाने, या न मरने के पीछे अमानवीय व्यवहारों के बीच जीते रह सकने की जिजीविषा ही है जिसकी ओर कहानी के अंत में नेरेटर के माध्यम से प्रकाश डाला गया है - "उसके मुख पर मौत की भीषण छाया नाच रही थी और वह जिंदगी से जोंक की तरह चिपटा था - लेकिन जोंक वह था या जिन्दगी ? वह जिन्दगी का खून चूस रहा था या जिन्दगी उसका ? मैं तय न कर पाया ।"

रजुआ नेरेटर के सामने जिन्दा खड़ा है, यद्यपि मौत की भीषण छाया उसके मुख पर मंडरा रही है । रजुआ जिन्दगी को जोंक की तरह पकड़े हुए है और जिन्दगी रजुआ को । यह मानवीय जिजीविषा की तीव्रतम अभिव्यक्ति है ।

इसी मानवीय जिजीविषा के दर्शन हमें "दोपहर का भोजन" में भी होते हैं । इस कहानी का हर पात्र अभावग्रस्तता की हालत में जी रहा है । प्रत्येक पात्र को दो रोटियों से ज्यादा खाना मुहताज नहीं है, लेकिन इन पात्रों की अदम्य जिजीविषा ही इन्हें जिंदा रखती है । हालत यह है कि मामला, चल नहीं सकता फिर भी गाड़ी किसी न किसी तरह

---

1. मौत का नगर, पृ.214

चल रही है ।

"डिप्टी कलक्टरी" नामक कहानी में भी यही स्थिति है । घोर अभावग्रस्तता की हालत में भी वे "डिप्टी कलक्टरी" का ख्वाब देखते हैं, भले ही वह पूरा न हो । जब तक सांस है तब तक इनमें आशा बनी रहती है । यह इनकी दुर्दम्य जिजीविषा का ही परिणाम है ।

"मूस" में देश, समाज, जाति की बृहत् गौरव या व्यथा-गाथाओं में क्षेपक का दर्जा भी न हासिल कर पाने वाले उस जीवन की कहानी है जिसकी अस्ति और क्रियाशीलता का दायरा, शिखर उपलब्धियों और मानापमान की आकांक्षा चिन्ता से परे, शरीर और मन के क्षणिक सुख-दुख के आवेग में जीते रहने तक ही सीमित है, जिसमें उपलब्धि और मानापमान से भी ज्यादा आग्रहशील है अस्तित्व चिन्ता । जीवन के हर स्तर पर अस्तित्व चिन्ता किसी न किसी रूप में मौजूद है लेकिन उच्च स्तरीय जीवन के प्रति प्रबल पक्षधरता के कारण यह जीवन आज भी घृणा और तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है और उच्चवर्ग की श्रेष्ठता और अदम्यन्यता को जीवित बनाये रखने के लिए उसे बदलने की हर कोशिश को नाकामयाब किया जाता है । अमरकान्त ने सप्रयोजन निम्नमध्यवर्गीय जीवन पर डाले परदे को उठाकर उसके पात्रों की जिजीविषा का निरूपण किया है ।

मध्यवर्गीय तथाकथित सफेद पोश तबके के छद्म की कहानियाँ

अमरकान्त ने ऐसी कहानियाँ भी लिखी हैं जिनका मुख्य सामेकार सफदपोश लोगों से है । ये लोग अपर से सम्भ्रान्त हैं लेकिन अंदर से निहायत टुच्चे हैं । "देश के लोग" जैसी कहानियाँ इस वर्ग की कहानियों के अन्तर्गत आती है ।

"देश के लोग" अपने देश के पढे-लिखे सफेदपोश किस्म के लोगों पर एक बेहद तल्ख टिप्पणी है जो देश के आम आदमी से घृणा करके उस पर कामचोरी और निकम्मेपन की आरोप लगाते हैं - जिन्हें अपने देश में कुछ भी अच्छी चीज़ दिखाई नहीं देती और इसीलिए वे सोचते हैं कि यदि यहाँ कुछ भी होता है तो स्तालिन, रूज़वेल्ट, पिकासो, आइंस्टीन, सार्त्र वगैरह प्रतिभाशाली लोग इस देश मे न होकर अन्य देशों में ही क्यों पैदा हुए ? .... इनके दिमागों में काफी हाउस की शामें, कहकहे, बेमसरफ बहसों की गंध बसी है । ये मामूली कपडे पहने रिक्शे में बैठी सवारी के साथ बैठने में भी अपनी हेठी समझते हैं और समय तथा जगह को लेकर उसकी मामूली जिज्ञासाओं का उत्तर यह सिर्फ उपेक्षा और अपमान से दे सकते हैं क्योंकि इससे इनके तिक्त अहं को ज़रूरी खुराक पहुंचती है । वही रिक्शे में बैठा आदमी चौक पहुँच कर सारी कोशिश के बावजूद रिक्शे से उतर नहीं पाता और खून की उल्टी करके वहीं ढेर हो जाता है । इकट्ठी हो गई भीड में से किसी के पूछने पर वह अपनी लम्बी साधनहीन बीमारी और अस्पताल में एक महीने पडे रहकर अन्तत: उन लोगों द्वारा ठीक बताकर उसे बाहर कर दिये जाने की बात वह बताता है । और इस तरह धीरे-धीरे हमारा पूरा देश इस छोटी सी कहानी पर फैलने लगता है । एक ओर अखिल जैसे सफेद पोश हैं मामूली कपडों में शिकनें पडी आदमी के पास बैठकर जिनके अपने माथे पर शिकनें पड़ने लगती है, जो अपने किताबी वैभव और सतही आकर्षणों की कैद से बाहर आने को एकदम तैयार नहीं हैं, दूसरी ओर अपने रोजमर्रा के मामूली दायित्व के दमान बचाते अस्पताल के कर्मचारी है जो एक महीने के तथाकथित इलाज के बावजूद उसके रोग का निदान नहीं कर पाते हैं और अपना पिण्ड छुडाने केलिए उसे मरने के लिए खूनी सडक पर ढकेल देते हैं । और जब वह रिक्शे से उतरने में ही आँखे काठकर लुढक पडता है तो एक बहुत बडी भीड उसके आस-पास इकट्ठी हो जाती है - अस्पताल और पुलिस को खबर करने केलिये आवाज़ें भी उभरती हैं लेकिन उस से मौत कोई नही होता

रिक्शे से उतरकर थोड़ी दूर पहुँचा हुआ अखिल भी इस शोर शराबे को सुनकर वापस आ जाता है लेकिन भीड में घुस जाने पर उसे पश्चाताप होता है जैसे गलती से वह गलत जगह पर आ गया हो । थोड़ी देर के लिए उसे उस मरे हुए आदमी के मामूली से सवालों का उत्तर न देने पर अफसोस होता है । लेकिन जल्दी ही वह इस कमज़ोरी से मुक्त हो जाता है और तब वह दो बीड़े पान खाकर अभी थोड़ी देर पहले हुए सब कुछ को भूलकर मुस्कराते हुये आगे बढ़ जाता है ।

"दुर्घटना" एक ऐसे ही व्यक्ति की कहानी है जो नये जमाने के उसूलों के मुताबिक चलकर सफलता की सीढ़ी-दर-सीढ़ी पार करता जाता है और जिसके आचार-व्यवहार मित्रता, रिश्तेदारी, विचार, आदर्श, त्याग आदि सभी चीज़ों के मूल में फायदे के हिसाब-किताब में सक्रिय एक होशियारी होती है और जिससे वह इतना झूठा, मक्कार और टुच्चा हो जाता है कि दूसरा आदमी उसके निकट निजी फायदे नुकसान के तहत ही अच्छा या बुरा रह जाता है, मित्रता या शत्रुता के काबिल रह जाता है ।

"डिप्टी कलक्टरी" नामक कहानी में भी हमें इसी सफेदपोशी छद्म के दर्शन होते हैं । शंकलदीप बाबू का परिवार "डिप्टी कलक्टर" के पद को लेकर हर तरह के ख्वाब पाले हुए है । वास्तविकता यह है कि परिवार का होनहार लड़का नारायण बी॰ए॰ थर्डक्लास में पास हुआ है और वह क्लर्की तक के लिए नहीं चुना गया, फिर भी न जाने इस सफेदपोश पद में क्या आकर्षण है शंकलदीप बाबू का पूरा परिवार इस पर लुट जाता है । अमरकान्त की रचनाओं का वस्तुपक्ष हमारे जीवन के एकदम निकट है । इसलिए हमारी अपनी जीवन्तता में ही ये रचनायें साँस लेती नज़र आती है लेकिन यह यथार्थ की एक आयामी रचनाएँ नहीं हैं बल्कि एक ऐसे भीतरी यथार्थ की रचनाएँ हैं जो अपनी प्रासंगिकता खो बैठती नहीं हैं ।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

अध्याय - चार

अमरकान्त का सामाजिक दर्शन

"साहित्य सदा समाज के प्रति सम्बोधित एवं निवेदित होता है[1]।"

अमरकान्त के इस कथन में लेखन के सामाजिक दायित्व की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया है । इस कथन के अनुरूप ही उनकी कहानियाँ एक गहरे दायित्व-बोध के तहत लिखी गई कहानियाँ हैं, जिन्हें उनकी ज़िन्दगी की गहरी समझ और सामाजिक चेतना ने ऐतिहासिक सच्चाई दी है । अमरकांत अपनी कहानियों में यथार्थ का आभास नहीं देते, यथार्थ को पुनरुज्जीवित करते हैं क्योंकि वे मानते हैं कि "ज़िन्दगी अन्तर्विरोधों से भरी है । हमें इसी अन्तर्विरोधों से भरी ज़िन्दगी की ज़मीन पर रचना को खड़ा करना होता है ।

---

1. अमरकांत वर्ष । - सं॰रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना : अमरकांत से डॉ॰ सत्यप्रकाश मिश्र का साक्षात्कार, पृ॰110

हम हवा में कोई कार्य नहीं कर सकते । लेखक को ज़िन्दगी के अन्तर्विरोधों का जायजा लेना ही पड़ता है[1]।" जो अन्तर्विरोध, विसंगतियाँ उन्होंने देखे, महसूस किये हैं उन्हें अपनी कहानियों की घटनाओं, स्थितियों तथा पात्रों में मूर्त करके वास्तविकता को परिभाषित किया है ।

अमरकान्त का कहानी के क्षेत्र में पदार्पण "नयी कहानी" दौर में ही हुआ । लेकिन जितने सहज और सीधे-सादे ढंग से अमरकान्त अपने आस-पास की ज़िन्दगी पर लिख रहे थे, उतनी सादगी से अन्य कहानिकार नहीं । इस सादगी में ही उनकी सारी शक्ति छिपी थी । अमरकान्त अपनी इस खूबी के बावजूद "नयी कहानी" दौर में घोर उपेक्षा का शिकार हुए । उनकी कहानियों में चित्रित ज़िन्दगी अपने परिवेश की सारी विसंगतियों और अन्तर्विरोधों तथा अपनी सादगी के कारण ही शायद इतनी उपेक्षणीय लगी और इसी वजह से उनकी कहानियाँ भी शायद उपेक्षा का शिकार बनीं - आज की कहानियों के पाठकों का जो बहुत बडा समूह तथाकथित निम्न मध्यवर्ग के परिवारों में रहता है, उनकी ज़िन्दगी की तहों में भी बहुत कुछ खोजने को पडा हुआ है । कितने ही प्राइवेट मजाक होते हैं, हाथ और मुँह के बीच में भी बहुत-सी बातें पैदा होती रहती हैं । अमरकान्त ने अपनी कहानियाँ यहीं से उठाई हैं और इस तरह हमारी आँखों में हमारी ही ज़िन्दगी के जाने कितने पर्दे उठ गये हैं । इस क्षेत्र में अमरकान्त की कहानियाँ किसी भी नये लेखक के लिए चुनौती है[2]।"

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं. रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना : अमरकान्त से राजकुमार सैनी द्वारा प्रस्तुत बातचीत, पृ.206

2. कहानी : नई कहानी - डॉ. नामवर सिंह, पृ.49-50

अमरकान्त इस अर्थ में सामाजिक जागरूकता के कथाकार नहीं है कि उन्होंने दलितों, शोषितों, पीड़ितों आदि पर बौद्धिक विगलन से कहानियाँ लिखी हैं, उनके प्रति छिछाली भावुकता प्रदर्शित की है - "अमरकान्त ने अपनी कहानियों में कहीं भी नैतिकता का नकाब नहीं ओढा है।"[1] निम्न मध्यवर्गीय दयनीयता असफलता और असहायता के बीच, उस सबका हिस्सा बनते हुए अमरकान्त ने कहानियाँ लिखी हैं। किसी विशेष स्थिति में अपनी असमर्थता, असहायता और शक्तिहीनता को ढँकने, नकारने या भुलाये रखने के जो-जो तर्क या भ्रान्तियाँ एक निम्न मध्यवर्गीय व्यक्ति काम में लाता है उन सबका अमरकान्त को अद्भुत ज्ञान है।

अमरकान्त की कहानियों का रचना-संसार अपने आस-पास के जीवन्त परिवेश से निर्मित है। जीवन का वैविध्य, उसकी ताजगी और अनगढता ही उनकी कहानियों का सबसे बडा आकर्षण है। यही कारण है कि अपने समय-संदर्भों की जैसी पहचान अमरकान्त में दिखाई देती है वह उनके किसी भी दूसरे समकालीन कहानीकार के यहाँ विरल है। जीवन के इस खुले और सीधे साक्षात्कार के कारण ही वह समाज में अच्छाई और बुराई के संघर्ष को इतने साफ तौर से पहचान और रेखांकित कर सके हैं। अमरकान्त की कहानियों में न तो किसी किस्म की फार्मुलेबाजी है और न किसी प्रकार की सिद्धान्तवादिता। कहानी के छोटे-छोटे टुकडों के माध्यम से ही वे अपने समाज और मौजूदा व्यवस्था की पूरी तस्वीर दे देते हैं। उनके इस रचना-संसार में सभी प्रकार के छोटे-बडे, अच्छे-बुरे लोग हैं। इसीलिए वे व्यक्तियों से शुरू करके भी सामाजिक प्रतिक्रियाओं की ओर बढते दिखाई देते हैं और हर प्रकार के छद्म, ढोंग, सामाजिक विसंगतियों और परिवेशगत चीडफाड के साथ ही वे एक बेहतर

---

1. अमरकान्त वर्ष। : सं॰रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना : अब्दुल बिस्मिल्लाह का लेख, पृ॰260

समाज केलिए अपनी कहानियों के माध्यम से सामाजिक बुराई का रचनात्मक विरोध करते हैं - "स्वयं को समाज का एक जिम्मेदार हिस्सा मानकर अमरकान्त का प्रयत्न उसे स्वस्थ-समर्थ और चेतन बनाने के लिए होता है । वह समाज की दुखती रगों पर अंगुली रखकर उसकी तकलीफ उजागर करते हैं ।"[1] अमरकान्त मोहभंग की स्थिति के रचनाकार है । उनकी कहानियाँ अपने समय और परिवेश की उन वास्तविकताओं को लेकर निर्मित हुई हैं जो स्वतन्त्रता के बाद की कुछ वर्षों की प्रतीक्षा के बाद आदमी के मोह को तोड़कर उसे एकदम सपने से जगा गई है । साथ ही ये वास्तविकताएँ इतनी अनुग्रहशील बन गई हैं कि कोई भी आश्वासन, कोई भी विश्वास उनको नजरअन्दाज़ कर जाने की मानसिकता नहीं पैदा कर सका है । उनकी कहानियों में स्वतन्त्रता के साथ जुड़ी हुई धारणाओं, अपेक्षाओं और किये गये संकल्पों की विसंगति का स्पष्ट चित्रण मिलता है । उनकी कहानियों में पारिवारिक सामाजिक संदर्भों की ऐतिहासिकता और परिवेशगत ईमानदारी मूर्त होकर सामने आती है जिसमें आम आदमी निरन्तर टुच्चा, धूर्त, दयनीय, दंभी हो गया है और सभी प्रकार के मूल्य,आदर्श एवं सिद्धांत विपर्यस्त होकर ध्वस्त होते गये हैं । अपने समकालीनों से और विशेषकर आन्दोलन प्रेमी कहानीकारों से वे इस अर्थ में भिन्न रहे कि जहाँ ये कहानीकार लेखकीय आज़ादी और वैशिष्ट्य के इच्छुक होकर अपनी कहानियों में असंतोष, कुंठा, निरीहता, निराशा और विशिष्ट कलात्मक रचाव को भरते रहे जिनका सामाजिक जीवन से कोई विशेष संबंध नहीं था, वहाँअमरकान्त एक सम्पन्न प्रगतिशील एवं ऐतिहासिक दृष्टि के माध्यम से अपने समय और परिवेश को मूर्त रूप प्रदान कर रहे थे ।

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं॰ रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना, यशपाल से नरेश सक्सेना की बातचीत में यशपाल के विचार,पृ॰265

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद समाज और व्यक्ति का आभ्यंतरिक आकार बहुत कुछ परिवर्तित हुआ है और साहित्यकारों ने उस परिवर्तन को गंभीरतापूर्वक लिया है । यह सामाजिक और व्यैक्तिक परिवर्तित आकार चिन्तन और संस्कार के स्तर पर स्पष्टत: देखा जा सकता है । अमरकान्त की कहानियों में इसी परिवर्तित आकार की सृष्टि हुई है । द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् जिजीविषा का प्रश्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहा है । मनुष्य ने समझा कि मनुष्य का जन्म इसलिए हुआ कि उसे जीवित रहना है । यही कारण है कि वह अनेक यातनाओं, विघ्नों, बाधाओं के बावजूद जीवित रहना चाहता है । जिजीविषा के इस उत्कट रूप का दर्शन हमें अमरकान्त की "जिन्दगी और जोंक" जैसी कहानियों में मिलता है । जिजीविषा के संदर्भ में ही पारिवारिक समस्याओं का जन्म भी हुआ । वस्तुत: सामन्तशाही ने समाज के टुकडे कर दिये । इसके कारण उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के बीच की खाई बढती गई और दोनों के बीच मध्यवर्ग का आदमी पिसता रहा । यही मध्यवर्ग पारिवारिक समस्याओं का शिकार हुआ । पारिवारिक समस्याओं से ग्रस्त जीवन का चित्रण "दोपहर का भोजन" जैसी कहानियों में मिलता है । समाज में मूल्यों के विघटन के फलस्वरूप न सिर्फ परिवार, बल्कि आदमी भी टूटता चला गया । आदमी ने आदमीपन को बचाये रखने के लिए जितनी भी योजनाएँ बनाई, सब बीच में ही टूट गई और उसका जीवन खंडों में विभक्त हो गया । "डिप्टी कलक्टरी" जैसी कहानियों में इसी प्रकार टूटते हुए आदमी का चित्रण किया गया है । इस टूटन के प्रति लेखक ने अपना आक्रोश व्यक्त किया "हत्यारे" कहानी में । इस कहानी में हत्या सम्पूर्ण सर्वहारा वर्ग की होती हैजिसके रक्त से भ्रष्टाचारिता, अकर्मण्यता, निर्धनता जैसी विपदाओं का जन्म हुआ है, जो अब एक दूसरे युग को भ्रष्ट करने केलिए तैयार है ।

परिवर्तनशीलता के दौर में पुरानी और नई पीढी की चिन्तन प्रक्रिया में भी बडा उलट-फेर हुआ है जिसके अनुसार पुरानी पीढी तथा नयी पीढी के दृष्टिकोण बदल गये हैं और नयी पीढ़ी अकर्मण्य हो गई है । अर्थात् चिन्तन के फलस्वरूप क्रिया में भी परिवर्तन की स्थिति आ गई है । नयी पीढी की इसी निष्क्रीयता का रूप हमें "गगन विहारी" "घुडसवार" जैसी कहानियों में देखने को मिलता है ।

अमरकान्त जीवन के प्रति विश्वास रखनेवाले प्रगति एवं यथार्थ के कथाकार हैं । अपने समय और परिवेश के यथार्थ की पहचान करने में उन्होंने अपने समकालीनों की तरह अपने आत्म-संघर्ष को हावी नहीं होने दिया । उनके अधिकांश समकालीन कहानीकारों का आत्मसंघर्ष यथार्थ के प्रति सीधी पहल से रोकता है पर अमरकान्त यथार्थ से सीधा साक्षात्कार करते हैं । समय और परिवेश की ऐतिहासिक परिणतियों ने आज के रचनाकार को यथार्थ की उन वास्तविकताओं के आमने-सामने ला खडा किया है जिनकी चुनौती के अस्वीकार का मतलब अपनी अस्तित्वहीनता का स्वीकार है । इसीलिए आज का रचनाकार स्थितियों को सुविधानुसार व्याख्यायित करने और विद्रोह एवं क्रान्ति की नकली मुद्राओं को अपनाकर अपने अस्तित्व को साकार रूप देने की चेष्टा की निरर्थकता से अच्छी तरह परिचित है । आज का रचनाकार जागृत विवेक तथा सार्थक क्रियाशीलता के परिप्रेक्ष्य में अपनी रचनाशीलता को परिभाषित करता है । अमरकान्त ऐसे ही रचनाकार हैं जो अपनी कहानियों में यथार्थ को खोजते हैं । जिस यथार्थ को लेकर उनकी कहानियाँ निर्मित होती हैं उस यथार्थ का स्वीकार सच्ची जिन्दगी की चुनौती का स्वीकार है । अत: "अमरकान्त आलोचनात्मक यथार्थवाद के लेखक है ।"[1] अमरकान्त अपनी कहानियों में अत्यंत सरलता का निर्वाह करते हुए भी समस्याओं के विश्लेषण में अपनी उस पैनी दृष्टि को बरकरार रखते हैं जो साधारण आदमी के साधारण जीवन के प्रति प्रतिबद्ध है ।

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं॰रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना, परमानंद श्रीवास्तव का लेख, पृ॰169

अमरकान्त की कहानियों में द्वन्द्वात्मक दृष्टि का भी परिचय मिलता है जो परस्पर विरोधी स्थितियों का समाहार कर पाने की शक्ति से निर्मित है । यह द्वन्द्वात्मक दृष्टि उनकी "मकान", "नौकर" "पलाश के फूल" जैसी कहानियों में देखी जा सकती है । अत: उनकी कहानियों में वर्गगत मनोविज्ञान के लक्षण भी मौजूद हैं - "अमरकान्त की कहानियों में एक वर्गीय मनोविज्ञान भी परिलक्षित होता है ।"[1]

प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कथा-लेखकों, यहाँ तक कि कई नये कहानिकारों के लिए वास्तविकता काफी हद तक कल्पित और वैयक्तिक थी, जिसे वे इन्द्रियबोध तथा अनुभव के स्तर पर ग्रहण नहीं कर सके थे । इसीलिए उनकी अधिकांश कहानियाँ अमूर्त और गढी हुई प्रतीत होती हैं । अमरकान्त ने इसके विपरीत वास्तविकता के प्रमुख सूत्रों को बडी ही सजगता और सूक्ष्मता के साथ ग्रहणकिया है और जीवन की असंगतियों को प्रकाशित किया है इसी कारण उनकी अधिकांश कहानियों में सामान्य मानव जीवन के बदलते संदर्भों तथा उसकी असंगति के अधिक नजदीक खींच ले जाने की क्षमता है । वे जीवन की गत्वरता तथा मूल्यों के संघर्ष को सही ढंग से पहचानते हैं और उनका प्रामाणिक चित्रण अपनी कहानियों में प्रस्तुत करते हैं ।

अमरकान्त की कहानियाँ बहुत ही खूबसूरती के साथ इस तथ्य को सामने लाती है कि मौजूदा समाज-व्यवस्था मानवीय मूल्यों को ध्वस्त कर, उनमें विपर्यय पैदा कर देती है । वह आदमी को ऐसी धूर्तता और चतुराई दे देती है कि वह सभी प्रकार के मूल्यों को तिलांजली देकर स्थितियों का उपयोग बडी कुशलता से अपने पक्ष में कर लेता है । "ऐसे अवसरवादियों ने मूल्यों को अपने हित के अनुरूप परिभाषित करके तथा स्थितियों में अनियंत्रित विपर्यय पैदा करके आनेवाली पीढी के लिए

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं·रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना तथा विजयमोहन सिंह का लेख, पृ·310

इसके अलावा कोई विकल्प नहीं छोडा कि अपने पूर्ववर्तियों की तरह वह भी अवसरवादी बनकर धन और प्रतिष्ठा के लिए सिद्धान्त और आदर्शों को अपने हित में प्रचलित करे।[1]"

अमरकान्त की कहानियाँ अपने परिवेश के अन्तर्विरोधों पर टिप्पणी करके वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था में मूल्य-संकट की उजागर करती हैं। ऐसी कहानियों द्वारा अमरकान्त की दृष्टि-सम्पन्नता समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और जिन्दगी के यथार्थ के प्रति व्यवहार में ईमानदार बने रहने के साहस को प्रकट करती है। अमरकान्त ने कहानी को जिन्दगी के लिए ज़रूरी चीज़ का दर्जा दिया है और कहानी का प्रयोग उन्होंने अपने निकट के जीवन-संघर्ष के लिए हथियार के रूप में किया है। कहानी का उपयोग उन्होंने सामाजिक जीवन के व्यापक संघर्ष में अपनी भूमिका अदा करने केलिए किया है। अमरकान्त की कहानियाँ अपने समय के फैशन और फार्मूलों से तथा आन्दोलनों से इसीलिए दूर जा पड़ी हैं कि उनमें समय और परिवेश के यथार्थ को उसकी समग्रता में बाँधने की कोशिश हुई हैं। "वे यथार्थ को डिटेक्टिव की तरह इन्वेस्टीगेट करते रहे हैं इसलिए उसमें साक्षी के बयान की सच्चाई होती है।[2]" अमरकान्त में जी रहे एक संवेदनशील विचारक के दायित्व की पूर्ति उनकी कहानियों में मूल्य-संकट के संदर्भ में हो सकी है। मानवीय तत्वों से संबंधित अमरकान्त की चिन्ता "मौत का नगर" जैसी कहानियों में प्रकट होकर सामने आती है। इस कहानी में आक्रमण की संभावना व प्रतिरक्षा की असमर्थ स्थिति में अपने आप को आक्रमण के लिए खुला छोड देने की विवशता प्रकट होकर सामने आती है। विवशता के साथ ही घनीभूत भय की आक्रान्तता में पशु में रूपांतरित हो जाने का तीखा एहसास और फिर एक अत्यंत अनतिदीर्घ मानवीय स्पर्श से आदमी में रूपान्तरित होने की प्रक्रिया इस कहानी का केन्द्रीय तत्व है जो अमरकान्त के संवेदनात्मक पक्ष को प्रकट करता है।

---

1. अमरकान्त वर्ष। : सं. रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना यदुनाथ सिंह का लेख, पृ.23।
2. वही, पृ.239

अमरकान्त की कहानियाँ भाव-बोध के स्तर पर हो रहे परिवर्तनों को बहुत ही खूबी के साथ व्यक्त करती है । वर्तमान युग के नागरिक जीवन में व्याप्त आलस्य और लापरवाही ने ऐसे बीमार लोगों की जमात खड़ी कर दी है जिनमें कोई काम परिश्रम पूर्वक सीखने-समझने की न तो हिम्मत है और न इच्छा । ये लोग मान और प्रतिष्ठा हासिल करने की महत्वाकांक्षा तो रखते हैं, पर इसके लिए इनके पास अपेक्षित शक्ति और सामर्थ्य नहीं है और इस अभाव को स्वीकार कर लेना ही इनकी समझदारी है । ये लोग जीवन को एक निश्चित ढर्रे पर चलाने के लिए ही, हर समस्या का समाधान आसान मानवीय नुस्खों के ज़रिए खोज निकालते हैं । ऐसे ही लोगों द्वारा जातिवाद और धर्मवाद को बढ़ावा दिया जा रहा है । अमरकान्त की "झुंडसवार" जैसी कहानियाँ इन्हीं मुद्दों को बड़ी ही सहजता से उकेर कर सामने ला देती हैं ।

अमरकान्त की कहानियाँ हमारे समय और परिवेश की नंगी तस्वीर सामने रख देती हैं । हमारे वर्तमान समाज में सिद्धान्तों और आदर्शों का कोई अर्थ नहीं रह गया है और इन शब्दों का इस्तेमाल पूँजीवादी व्यवस्था द्वारा पैदा गई अवसरवादी मनोवृत्ति के लोग अपने हित में कर रहे हैं । ऐसे शब्दों का प्रयोग कर इन अवसरवादी लोगों ने स्वतन्त्रता के पश्चात् धन और प्रतिष्ठा का अर्जन किया है । ऐसे ही अवसरवादी लोगों को अमरकान्त ने अपनी कहानी "बस्ती" में बेनकाब किया है । इस कहानी में दो राजनीतिक नेता रामलाल तथा बाकेलाल लोगों को आदर्श तथा सिद्धांतों का मोह दिखाकर पहले तो बस्ती बनवा लेते हैं और फिर उस बस्ती का उपयोग अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए करते हैं । "लड़की की शादी" कहानी में भी अवसरवादी मनोवृत्ति को प्रदर्शित कर यह दिखलाया गया है कि सिद्धान्तों, आदर्शों का इस पूँजीवादी व्यवस्था में कोई स्थान नहीं रह गया है । इस कहानी का कृष्णमोहन प्रभावशाली, नेतानुमा आदमी की

काली और बदशक्ल लड़की से शादी केलिए तैयार होकर न केवल अवसरवादी मनोवृत्ति को प्रदर्शित करता है बल्कि अपने कृत्य को सिद्धान्त और आदर्श द्वारा समर्थित बताकर यह साफ कर देता है कि दुनिया में इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं रह गया है ।

वर्तमान समाज में ठेकेदारों, व्यवसायियों, भूस्वामियों द्वारा मज़दूरों, किसानों तथा भूमिहीनों को शोषण, बेगार, बलात्कार का शिकार बनाया जा रहा है । पूँजीवादी व्यवस्था ने मालिक और गुलाम के रिश्तों को नया नाम दे दिया है । यह रिश्ता अब अफसरों - मातहतों की सहयोगी भूमिका के रूप में है । इसमें अफसर सिर्फ स्वामी के रूप में अपने स्वार्थ के लिए एक-से-एक जोरदार दाँव-पेंच अपनाने में चालाक हो गया है जबकि मातहत निहायत निकम्मा, ओदा और टुच्चा हो गया है । इस बदलाव में यह तो चिन्तीय है ही कि पूँजीवादी व्यवस्था में वे नहीं टिक पाते जो स्वतंत्र प्रकृति के होते हैं लेकिन इससे भी चिन्तीय है स्वतन्त्र प्रकृति के व्यक्तियों को निकाल दिये जाने के खयाल मात्र से उनके सहकर्मियों का आनन्दित होना । ये मातहत सहकर्मी तमाम गलत बातों को सहज करने के अभ्यासी बन गये हैं तथा उन गलत बातों को ही अपनी शक्ति समझते हैं, आरोपित उदारता से अपनी अयोग्यता और विश्वासहीनता को छिपाते हैं । भारतीय समाज का यह पहेलू "छिपकली" जैसी कई कहानियों में उभरकर सामने आया है ।

आज़ादी के बाद भी विकास के पूँजीवादी पथ पर लगातार बढ़ते रहने के कारण आज के भारतीय परिवारों की जो स्थिति है उसका अत्यंत ही सजीव, मार्मिक और यथार्थवादी चित्रण अमरकान्त ने किया है -

"भारत की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा घोर अभाव और असफलताओं के अन्तहीन सिलसिले को भुगतता हुआ कैसे क्रमशः अपने हास्यास्पद दिवा-स्वप्नों में जीवित रहने लगता है, उसका पारिवारिक और सामाजिक जीवन कैसी भौंडी असंगतियों से भर जाता है इसका व्यापक सामाजिक संदर्भ अपने सम्पूर्ण प्रभाव में मानवीय करुणा ही उत्पन्न करता है[1]।"

अमरकान्त ने अपने समय और परिवेश में जो कुछ घटित होते देखा उसके प्रति उनकी जिज्ञासा मात्र दर्शक या साक्षी की नहीं थी क्योंकि उसका उनकी जिन्दगी के साथ कई स्तरों पर संबंध था। वे खुद गाँवों और कस्बों की जिन्दगी का एक अंग थे। नयी स्थितियों, घटनाओं, क्रियाओं से उस जिन्दगी में आने वाले बदलावों का प्रभाव उनकी खुद की ज़िन्दगी पर भी पड रहा था; दूसरे उन गाँवों, कस्बों के साथ-साथ पूरे भारतवर्ष की ज़िन्दगी को लेकर उनके कुछ स्वप्न थे, कुछ अपेक्षाएँ थीं। अपने सिद्धान्तों और आदर्शों को लेकर वे इस ज़िन्दगी के प्रति ईमानदार बने रहे लेकिन उन लोगों का सामना करने के लिए उपयुक्त हथियार नहीं उठा सके जो इसे विपन्न, भ्रष्ट और बेहाल बना रहे थे। इसीलिए अमरकान्त ने अपने अभावों की पूर्ति के लिए रचनात्मक संघर्ष किया : "अमरकान्त ने जिन्दगी के अभावों को रचनात्मकता की भट्ठी में ईंधन की तरह झोंका है और उससे अपने रचनाकार को तपाकर खरा किया है। अपने अभावों और लेखन के बीच एक ऐसा समीकरण स्थापित करते चले हैं जो आमतौर से सम्भव नहीं होती[2]।"

---

1. अमरकान्त वर्ष। : संपादक - रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना - विजयमोहन सिंह का लेख, पृ.312
2. वही, गिरिराज किशोर द्वारा लिखित अमरकान्त पर संस्मरण, पृ.217

अमरकान्त ने जो कहानियाँ लिखी है उनका उस रूप में होने के मूल में उन कहानियों में निहित रचना संसार के साथ अमरकान्त के अविच्छिन्न जुडाव एवं तादात्मय का तर्क विद्यमान है : "अमरकान्त ने अपेक्षाकृत छोटे घेरे में अपने अनुभव की तमाम सम्पुटिता को अभिव्यक्ति दी है और इसमें कहीं-कहीं वे अपने समकालीनों से आगे चले गए हैं[1]।"
अमरकान्त ने अपनी कहानियों में अपने चारों ओर के निम्नमध्यवर्गीय समाज का चित्रण किया है और उसकी बुराइयों को उजागर किया है क्योंकि उनकी रचनात्मक ऊर्जा का मुख्य स्रोत यही निम्नमध्यवर्गीय समाज है - "अमरकान्त के लेखन को समाज के नितान्त सामान्य वर्ग का प्रतिनिधि मान लेना ही मुझे अच्छा लगता है। इस वर्ग को अभिव्यक्ति देने की असाधारण क्षमता अमरकान्त में है[2]।"

अमरकान्त की कहानियाँ भारतीय संस्कारों और भावनाओं से जुडी हुई हैं, इन भावनाओं और संस्कारों के साथ जो पिछडापन, अन्ध-विश्वास और पाखंड जुडा हुआ है, उन्हें भी विडम्बनात्मक ढंग से उजागर करते हैं। इसीलिए उनकी कहानियों में बहुधा निम्नमध्यवर्गीय व्यक्ति की भावनाओं और अन्तर्विरोधों का चित्रण देखने को मिलता है - "वे भारतीय निम्नमध्यवर्गीय मनुष्य की भावनाओं का जितना आदर करते हैं उतना ही उसके अन्तर्विरोधों को भी तीखे व्यंग्यात्मक ढंग से उजागर करते हैं[3]।"

---

1. अमरकान्त वर्ष। : सं. रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना वही, ममता कालिया से अमरकान्त पर बातचीत में अश्क के विचार, पृ.294
2. वही, यशपाल से ममता कालिया की बातचीत में यशपाल के विचार, पृ.266
3. वही, विजय मोहन सिंह का लेख, पृ.309

अमरकान्त अपनी सशक्त समाजशास्त्रीय दृष्टि के कारण ही आदमी के ओछेपन और स्वार्थ की पर्तों को छीलने में समर्थ हो सके हैं - "वह उस मिनीमिज्म के शिकार नहीं होते जो आदमी के मानवीय विवेक और विकास की संभावनाओं पर से विश्वास उठ जाने से पैदा होता है[1]।" अमरकान्त के लिए लेखन एक विलासिता नहीं अपितु एक आंतरिक विवशता है क्योंकि अमरकान्त का लेखन सामाजिक बदलाव के प्रति प्रतिबद्ध है । यही वजह है कि सामाजिक विसंगतियों, छद्म और अन्तर्विरोधों के उद्घाटन के साथ ही साधनहीन और विपन्न आदमी के शोषण एवं विरोध की लडाई में उसके साथ और उसकी लडाई लडनेवालों में अमरकान्त की अहम भूमिका रही है ।

अमरकान्त की सामाजिक दृष्टि अतीत की न होकर वर्तमान की है और उनकी यह दृष्टि समाज में आज जो कुछ घटित हो रहा है उससे जुडने केलिए संघर्ष करती है - "अमरकान्त की कहानियों का समय "वर्तमान" है - ये कहानियाँ वर्तमान में रहने के लिए संघर्ष करती है[2]।" अमरकान्त का रचनात्मक समाज भावुक आद्रता का न होकर व्यंग्यात्मक आद्रता का है, यह उनकी ऐतिहासिक दृष्टि का परिणाम है ।

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना मधुरेश का लेख, पृ.163
2. वही, परमानन्द श्रीवास्तव का लेख, पृ.170

अध्याय - पाँच

अमरकान्त की कहानियों की शिल्प संरचना

अमरकान्त का कथा-विन्यास

अमरकान्त ने अपने अन्य समकालीन कहानीकारों के समान अपनी कहानियों के शिल्प-पक्ष को सजाने-संवारने का प्रयास नहीं किया है । अमरकान्त का कथा-विन्यास सीधा-सादा और सहज है क्योंकि अमरकान्त मानते हैं कि "समाजवादी लेखक शिल्प की उपलब्धि को लेकर ही आगे जायेगा, चाहे वह उपलब्धि पूँजीवादी युग में ही विकसित हुई हो, वह उससे पीछे नहीं रहेगा ।"[1] अमरकान्त अपनी कहानियों में किसी अजीब थीम अथवा पात्र को गढने में श्रम और साधना नहीं करते । अपने परिवेश से जिन पात्रों को वे लेते हैं उनके चरित्र-चित्रण में अमरकान्त अपनी सामग्री का बडे ही कौशल से प्रयोग करते हैं इसी कारण ऐसा लगता ही नहीं कि उनकी कहानियों का शिल्प किसी आयास-प्रयास का परिणाम है ।

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं. रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना : राजकुमार सैनी द्वारा अमरकान्त से प्रस्तुत बातचीत, पृ.209

किसी आयाम-प्रयाम के न होते हुए भी अमरकान्त में शिल्प की सघनता ज़रूर है ।

शिल्प अमरकान्त के लिए सहज अभिव्यक्ति का विषय है - "वे "शिल्प" को विशेष महत्व नहीं देते"[1] । अमरकान्त के कथा-विन्याम में "शिल्प" का कोई अलग मे आकर्षण न होते हुए भी उनके सम्पूर्ण कथा-विन्याम में उनके अपने ही अलग ढंग का शैली-शिल्प पाया जाता है ।

अमरकान्त के कथा-विन्याम में मुख्यत: ये पद्धतियाँ पाई जाती है : आत्मालाप या आत्मकथ्य की पद्धति, रेखाचित्र और व्यक्तिचित्र की पद्धति, मार्थक ब्यौरो के द्वारा स्थिति के व्यंग्य, विद्रूप आदि को प्रत्यक्ष करने की पद्धति तथा यथार्थवादी शिल्प को अपनाकर रचना प्रस्तुत करने की पद्धति ।

ये चार पद्धतियाँ ही उनकी अनेक कहानियों में अपनाई गई हैं । इनमें ही प्रच्छन्न रूप से वह व्यंग्य अथवा आत्म-व्यंग्य प्रधान रहता है जिसे वे परिवेश के अन्तर्विरोधों सहित व्यक्त करते हैं । अमरकान्त ने इन्हीं पद्धतियों की और गहरी सम्भावनाओं की ओर जाने की कोशिश भी कम ही की है, "हत्यारे" जैसी एक-दो कहानियाँ इसका अपवाद हैं ।

आत्मालाप या आत्मकथ्य की पद्धति

अमरकान्त ने इस पद्धति को अपनी कहानियों में बार-बार दुहराया है । इस पद्धति द्वारा कभी वे स्थिति में छिपे व्यंग्य या विद्रूप को प्रत्यक्ष करते हैं तो कभी-कभी पात्रों की विसंगति को । "ज़िन्दगी और जोंक"

---

1. आज की कहानी - विजय मोहन सिंह, पृ.76

नामक कहानी में लेखक ने खुद आत्मालाप द्वारा रजुआ नामक भिखमंगे की दारुण स्थिति को प्रत्यक्ष किया है जो सिर्फ अमानवीय व्यवहारों के बीच जीने को बाध्य है - "मैं ने उसकी दशा देखकर कई बार क्रोधवश सोचा है कि यह कम्बख्त एक ही मोहल्ले में क्यों चिपका हुआ है ? घूम-घूमकर शहर में भीख क्यों नहीं मांगता ? मुझे कभी-कभी लगता है कि वह किसी का मोहताज न होना चाहता था और इसके लिए उसने कोशिश भी की जिसमें वह असफल रहा ।"[1]

"घुंडसवार" नामक कहानी में भी अमरकान्त इसी पद्धति को अपनाकार मध्यवर्गीय मानसिकता की कमज़ोरी को प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं - "इसके बाद मेरी नींद खुल गई और मैं हडबडा कर बैठ गया । मैं पसीने में नहाया हुआ था । मेरी सांसे फूल रही थीं । मैं ने अपनी देह को छुआ और इधर-उधर देखा । नहीं, कुछ नहीं था । कैसा गलत, वाहियात और असंभव सपना है ।"[2] इस प्रकार अमरकान्त ने इस कहानी में मूल्यों के विपर्यय होने और वास्तविकताओं के स्वप्न हो जाने के यथार्थ को प्रस्तुत किया है ।

"गले की जंजीर" नामक कहानी में अमरकान्त ने निम्न मध्यवर्गीय सोच और मानसिकता को प्रस्तुत किया है । इस कहानी का नायक "मैं" जिसके गले से जंजीर चुरा ली जाती है, अपनी कमज़ोर मानसिकता और सोच का शिकार है जिसे लेखक ने आत्मकथन द्वारा यों प्रस्तुत किया है - "लगभग दस बज रहे थे और मैंने अभी तक मुंह में कुछ भी नहीं डाला था । मैं अब तंग आ गया था और चुपचाप आकर कमरे में बैठ गया । मैं ने मन-ही-मन निश्चय किया कि प्रधान सम्पादक तथा जनरल मैनेजर के आने पर उनसे ही सब कुछ कहूंगा । वे शरीफ आदमी है, जंजीर का पता लगाने में कुछ उठा नहीं रखेंगे ।"[3]

---

1. अमरकान्त : प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.64
2. मौत का नगर - घुंडसवार कहानी, पृ.95 (कहानी संग्रह)
3. अमरकान्त की कहानियाँ - भाग एक - अमरकान्त, पृ.25

"मकान" नामक कहानी में अमरकान्त एक साधारण आदमी को मकान तक न मिल पाने की हकीकत को आत्मालाप पद्धति द्वारा चित्रित कर यह दिखाते हैं कि वास्तविकता मकान के अन्दर है जहाँ तकलीफ ही तकलीफ है और इच्छाएँ व उनकी पूर्ति मकान के बाहर हैं - "मैं हैसियत वालों की बात नहीं करता । यह सभी जानते हैं कि आजकल मकान नहीं मिलते और जो मिलते हैं, उनके किराये अनाप-शनाप बढ गये हैं । वस्तुत: एक साधारण आदमी को मकान के बारे में सोचने का अधिकार नहीं है । मकान-मालिक तरह-तरह के होते हैं पर सबके कुछ-न-कुछ नखरे होते हैं ।[1]" "लड़की की शादी" नामक कहानी में अमरकान्त इस पद्धति के ज़रिये हमारे समय और परिवेश पर टिप्पणी करते हुए अवसरवादी मनोवृत्ति को प्रस्तुत करने में सफल हुए है - "किसी व्यक्ति, को देखकर, या किसी खास परिस्थिति में पड़कर मेरे दिमाग में अनोखे विचार और कल्पनाएँ उत्पन्न होती हैं । दुनिया जैसी है, उसको देखते हुए, यदि कोई अनजान व्यक्ति मुझको बार-बार नमस्कार करता है, तो इसका मतलब है कि वह मेरे प्रति कृतज्ञ है या कृतज्ञ होने का आकांक्षी है । इसको कहते हैं विचार । इसीलिए मैं अपने को विचारक और विद्वान कहता हूँ । मैं छोटे-से छोटे विचार की अवहेलना नहीं करता । उसको पालता-पोसता हूँ । और अन्त में उस पर सवार होकर दुनिया को जीत लेता हूँ । जाहिर है कि इस दुनिया का शासक घोडा या चमगादड नहीं हो सकता । इसी से मेरे पास धन है, और शक्ति भी ।"[2]

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ·67
2. वही, पृ·79

रेखाचित्र और व्यक्तिचित्र की पद्धति

अमरकान्त ने अपनी बहुत-सी कहानियों में इस पद्धति को अपनाया है । "कहानी के रचना-विधान में रेखाचित्र की विशेषताएँ लाना अमरकान्त की खास विशेषता है[1] ।" अमरकान्त ने अपनी ज्यादातर कहानियों में पात्रों के रेखाचित्रों को खड़ा करके यथार्थ का चित्रण किया है । "देश के लोग" नामक कहानी में अखिल नामक युवक का रेखाचित्र इस प्रकार खींचा गया है - "उसका शरीर मोटा और थुल-थुल था । मुँह कुकन्दर की तरह छोटा और रूखा था, लेकिन पतली नाक और बड़ी-बड़ी आंखों के कारण उसको बदसूरत नहीं कहा जा सकता[2] ।"

"जनमार्गी" नामक कहानी में बलराज नामक व्यक्ति का व्यक्तिचित्र यों प्रस्तुत किया गया है जिससे कि उसकी चरित्रगत विशेषताओं को समझा जा सकता है - "वह अभी पचास का नहीं हुआ था और उसके सिर के बाल कपास हो रहे थे । वह ठिगना और दुबला-पतला था । उसकी गरदन छोटी थी और मुँह बड़ा तथा छुहारे की तरह सूखा था, जिस पर घोंसले के तिनके की तरह झुर्रियां उभर आयी थीं । चश्मे के भीतर उसकी आंखें मलक रही थीं और होंठ एक हलकी मुस्कराहट से इस तरह खुल गये थे, जैसे वह दूर से ही किसी आत्मीय को देख रहा हो[3] ।"

"काली छाया" नामक कहानी में उस व्यक्ति का रेखाचित्र लेखक ने बड़ी कुशलता से खींचा है जो चोरी के आरोप में पकड़ लिया जाता है -

---

1. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - नरेन्द्र मोहन, पृ.87
2. देश के लोग (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ.41
3. अमरकान्त की कहानियाँ भाग - एक, पृ.32

"वह काला नहीं था ..... हलका साँवला रंग, उम्र बीस-बाईस और शरीर लम्बा परन्तु पतला । वह एक कत्थई रंग की लुंगी और फटी बनियान पहने था । मुँह चपटा और आँखें छोटी-छोटी[1] ।"

"फर्क" नामक कहानी में उन्होंने जिस डाकू का व्यक्तिचित्र खींचा है वह उस डाकू की पूरी तस्वीर को पाठकों के सम्मुख रख देता है - "वह लगभग छः फुट का एक व्यक्ति था । काफी तगडा जैसे कोई पहलवान हो । काला रंग बडी बडी मूँछें । उसकी लाल-लाल आँखें थीं[2] ।"

"दो चरित्र" कहानी में अमरकान्त ने एक तेरहवर्षीय भिखमंगे का बेहद मार्मिक रेखाचित्र खींचा है - "वह दुबला-पतला था, और उसका हड्डीदार चेहरा ऐसा फक और स्याह था, जैसे दूध की नयी हंडिया के पेंदे पर आँच लगाने से शुरू-शुरू में कालिख की एक हलकी पर्त जम जाती है । उसके शरीर पर एक लँगोटा और बनियान थी, और सिर पर एक फटा-पुराना अंगोछा लपेट रखा था[3] ।"

सार्थक ब्यौरों के द्वारा स्थिति के व्यंग्य, विद्रूप आदि को प्रत्यक्ष करने की पद्धति

नई कहानी के रचना-विधान में ब्यौरों का महत्व बहुत बढ़ गया है । इनके द्वारा लेखक कहानी के वातावरण का निर्माण करता है । अमरकान्त ने अपनी कहानियों में ब्यौरों का सर्जनात्मक प्रयोग करके माहौल के चित्रण द्वारा ही बहुत कुछ कहने का प्रयास किया है । वे अपनी कहानियों में

1. अमरकान्त की कहानियाँ - भाग-एक, पृ.48
2. मित्र मिलन तथा अन्य कहानियाँ - अमरकान्त, पृ.23
3. वही, पृ.129

स्थितियों और घटनाओं का वर्णन नहीं करते, उनके सपाट ब्यौरे नहीं देते बल्कि वे स्थितियों को सटीक ढंग से उभारनेवाले सार्थक ब्यौरे देते हैं और उनके संयोजन द्वारा उन्हे खास बिन्दु तक ले जाकर स्थिति की विसंगति, व्यंग्य या विद्रूप को प्रत्यक्ष कर देते हैं । "दोपहर का भोजन", "बस्ती" जैसी कई कहानियों में अमरकान्त ने इस पद्धति को अपनाया है ।

"दोपहर का भोजन" नामक कहानी की प्रारंभिक पंक्तियाँ ये हैं - "छह वर्षीय लडका प्रमोद नंग-धडंग पडा था । उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ साफ दिखाई देती थीं । उसके हाथ-पैर बासी ककडियों की तरह सूखे तथा बेजान पडे थे और उसका पेट हंडिया की तरह फूला था । उसका मुख खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियाँ उड रही थीं ।"[1]

कहानी का यह अंश जो ब्यौरे के रूप में है, एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार की दीन-हीन आर्थिक व्यवस्था को पूरी बेबाकी के साथ पाठकों के सम्मुख ला देता है ।

"बस्ती" नामक कहानी में एक साधारण से आदमी के जीवन-यापन से संबंधित ब्यौरा यों प्रस्तुत किया गया है - "वह एक साधारण आदमी था । अब वह कविताएँ नहीं लिखता था । काव्य-उत्साह में उसने कभी अपना उपनाम रख दिया था "आत्मानन्द" । इसके बाद वह नून-तेल-लकडी के फेरे में पड गया । वह दुबला और दुबला-पतला था । उसके चार टेढे-तिरछे बच्चे थे, जैसे शिवजी के बराती । वह सीधा और सरल था और दूसरों पर जल्दी ही विश्वास कर लेता था । वह उस समय एक सीलन-भरे बदबूदार मकान में रहता था, जहाँ चौबीसों घंटे अंधेरा रहता था उसके मकान में एक ही कोठरी थी जिसमें वह इस प्रकार निवास करता था,

---

1. अमरकान्त की कहानियाँ - भाग एक, पृ.113

जैसे पुराने सामानों का एक कबाड़ अन्दर ठूस दिया गया हो[1]।"

कहानी के इस अंश में हमें एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण मिलता है जिसकी स्थिति एक निम्नमध्यवर्गीय व्यक्ति जैसी है। वह बहुत सरल स्वभाव का आदमी है और उसका जीवन अभावों से भरा पड़ा है। इस व्यक्ति "आत्मानंद" के अभावों की पूर्ति आंशिक रूप से तब होती है जब एक तीव्र आन्दोलन के उपरान्त एक बस्ती बन जाती है और एक आदर्श जीवन उस बस्ती में पनपने लगता है - "धीरे-धीरे स्वस्थ सामाजिक जीवन विकसित होने लगा। लोग धूमधाम से अपने सामाजिक और धार्मिक त्यौहार मनाते[2]।"

कहानीकार इस तरह के ब्यौरे निरन्तर कहानी में देता जाता है और अन्त में इन ब्यौरों के संयोजन द्वारा वह उस सामाजिक-राजनीतिक विसंगति को प्रत्यक्ष करता है जिसके कारण एक समूची बस्ती उजड़ जाती है और बस्ती के उजड़ने के साथ ही आत्मानंद की समूची आशा-आकांक्षाओं पर भी पानी फिर जाता है - "आत्मानंद जैसे जड़ हो गया। उसने लोगों से मिलना-जुलना छोड़ दिया। वह चुपचाप सिर झुकाकर घर से बाहर निकल जाता। शाम को दफ्तर से आने के बाद वह सिर नीचा करके घर के अंदर घुस जाता[3]।"

पूरी कहानी आत्मानन्द की स्थिति का सहज प्रस्तुतीकरण है लेकिन उनके इन ब्यौरों में समय की तथा हमारे परिवेश की असहजता तथा अमानवीयता का एक गहराता हुआ अनुभव है। प्राय: अमरकान्त इस एक स्थिति तक पहुँच जाना ही चाहते हैं।

---

1. मित्र मिलन तथा अन्य कहानियाँ - अमरकान्त, पृ.25
2. वही, पृ.29
3. वही, पृ.35

यथार्थवादी शिल्प को अपनाने की पद्धति

अपनी पूर्ववर्ती शिल्प-प्रणाली को नये कहानीकारों ने तोडा है । इन कहानीकारों ने वास्तविक घटनाओं और जीवन-संदर्भों को ग्रहण किया है । यथार्थबोध के परिणामस्वरूप नयी कहानी में जिन विशेषताओं का समावेश हुआ उनमें प्रमुख है व्यक्ति का एक सामाजिक संदर्भ में चित्रित करने की चेतना । यह विशेषता रचना-प्रक्रिया से ही उपजी हुई है - "यथार्थ की चेतना का अस्तित्व स्वीकार करते हुए अनायास ही रचनाकार कृति में अपने अनुभव के संश्लिष्ट चित्रण, और उस अनुभव की ऐतिहासिक चेतना के पाठक के मन में रूपांतरण आदि प्रश्नों के प्रति सचेत हो जाता है[1]।" नई कहानी में यथार्थ की प्रतिष्ठा के साथ ही साथ रचनाप्रक्रिया के प्रति सचेतनता भी बढी है ।

नयी कहानी में यथार्थ की प्रतिष्ठा हो जाने से "उसमें रूप, वस्तु, भाषा, वातावरण, संवेदना का एक समवाय संघटन दिखाई पडता है[2]।" चरित्रों के व्यक्तित्व की सम्पूर्ण चेतना की निर्वैयक्तिक अभिव्यक्ति भी नई कहानी में यथार्थबोध के महत्व को स्वीकारने के कारण आई है । इसी तरह से वातावरण को अनुभव का विषय बनाकर कहानी में उसका चित्रण करना यथार्थ की प्रतिष्ठा के प्रश्न को रचनाप्रक्रिया का प्रश्न मान लेने के परिणामस्वरूप ही है ।

---

1. आधुनिक हिन्दी कहानी - सं. गंगाप्रसाद विमल, परमानन्द श्रीवास्तव का लेख, पृ.93
2. वही, पृ.93

अमरकान्त ने भी अपनी कहानियों में ऐसे ही शिल्प को अपनाया है । उनकी कहानियों में इस नई रचनात्मक संवेदना की स्वीकृति नये यथार्थबोध की उपलब्धि के कारण ही है । यही वजह है कि अमरकान्त ने अपने पूर्ववर्तियों के शैली-शिल्प का परित्याग कर अपने लिए सर्वथा नूतन शिल्प का आविष्कार किया - "प्रेमचन्द के बाद की मनोवैज्ञानिक या शिल्प केन्द्रित कहानियाँ अमरकान्त के कथा-संसार में अपनी कोई पहचान नहीं छोडती[1] ।"

यथार्थवादी शिल्प को अपनाने के कारण ही अमरकान्त की रचना-प्रक्रिया एक ओर जहाँ आदर्शवादियों के एकांतिक और काल्पनिक उत्तरों से प्रेरित होनेवाली रचना-प्रक्रिया से भिन्न है, वहीं दूसरी ओर वे यशपाल की तरह वैचारिक सूत्रोंवाले उत्तरों के लिए कहानी नहीं गढते ।

"पलाश के फूल" "नौकर", "सप्ताहांत", "मौत का नगर" तथा "हत्यारे" जैसी कहानियाँ अमरकान्त के यथार्थवादी शिल्प के नमूने हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं ।

"पलाश के फूल" नामक कहानी में अमरकान्त एक ऐसे दुष्ट पात्र "रायसाहब" को हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं जो अपनी स्त्री लोलुपता के कारण कच्ची-उम्र की "अंजोरिया" को कीचड में घसीटते हैं और फिर बडी आसानी से किसी माया, शैतान या दु:स्वप्न से छूटने पर अपनी ही पीठ ठोंकते हैं और भगवान की कृपा पर गदगद होते हैं । वस्तुत: ऐसे चरित्र की सृष्टि अमरकान्त शिल्प के प्रति यथार्थवादी आग्रह के फलस्वरूप ही

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं.रवीन्द्रकालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना परमानन्द श्रीवास्तव का लेख, पृ.166

कर सके हैं । इस संदर्भ में इस कहानी की ये पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य हैं - "···· अब सारा जीवन सरकार के चरणों में अर्पित है । मैं अच्छी तरह समझ गया कि सब उन्हीं की लीला थी । वह चाहते थे कि मै शैतान के चक्कर में फसूँ जिससे मेरी आँखें खुले । ····· अब मैं सवेरे नहा-धोकर चौकी पर पूजा करने बैठ जाता हूँ तो घंटो सुध-बुध नहीं रहती । शाम को भी ऐसा ही चलता है । चौबीसों घंटे मन उन्हीं में रमा रहता है[1] ।"

"नौकर" कहानी में अमरकान्त हमारे सामने नौकर की ऐसी तस्वीर प्रस्तुत करते हैं जिसका जीवन पालतू जानवर से भी बदत्तर है । सारा वकील का परिवार इस नौकर रूपी जानवर से तरह-तरह के काम करवातें हैं पर बदले में नौकर सिर्फ गलियों का शिकार बनता है यह चरित्र भी अमरकान्त के यथार्थवादी शिल्प का परिचायक है जिसकी सही तस्वीर इन वाक्यों में प्रकट हैं - "कमरे में पूजा करते हुए अचानक वकील साहब गरज उठते, "सूअर का बच्चा ! सुन ले जन्तु, अगर आइन्दा तूने ऐसा किया तो नौकरी से निकाल बाहर कर दूँगा[2] ।"

अमरकान्त के यथार्थवादी शिल्प का एक अलग नमूना "मौत का नगर" नामक कहानी में मिलता है जहाँ कहानीकार बडी ही सहजता से साम्प्रदायिक दंगों के कारण उपजी भयावहता का चित्रण करता है - "डर के अलावा वह कुछ भी नहीं सोच पाता था । वह कायर नहीं था और ऐसी लडाइयों के वह सदा विरुद्ध रहा था । पर अनजान की भयावह कल्पना ने उसके शरीर की एक-एक बूँद खींच ली थी । पता नहीं कैसे

---

1. देश के लोग (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ.104
2. अमरकान्त की कहानियाँ (भाग एक) ;पृ.8।

891H-32 AMA·09
RAO

उसके अन्दर एक विष प्रवेश कर गया था और उसके भीतर-ही भीतर भिन रहा था[1]।"

अमरकान्त ने अपने यथार्थवादी शिल्प का विशिष्ट रूप दिखाया है "सप्ताहात" नामक कहानी में। यह कहानी वैसे तो वहीं खत्म हो जाती है जहाँ सुबह के अखबार से पता चल जाता है कि रामसंजीवन की लाटरी का नम्बर नहीं आया और जनक बाबू ने अपनी लौकी का बदला लेने के लिए वह खबर उडा दी थी। लेकिन अमरकान्त ने उसके बाद तीन-चार परिच्छेद लिखे हैं जिनमें रामसंजीवन मुहल्लेवालों के उपहास का पात्र न बनकर बाहर निकल जाता है, लगातार चलता जाता है; गलियों बाजारोंके बाहर निकलकर लगातार चलता जाता है; गलियों बाजारों के बाहर निकलकर कहीं पार्क में घूमता है और थक कर एक वट वृक्ष के नीचे लेट जाता है। कहानी का अंतिम वाक्य है - "कुछ देर बाद ही उसकी नाक बोलने लगी और वह सुखपूर्वक सो गया[2]।" इस कहानी के अंत के बारे में अश्क का विचार है कि "उसका अंत निश्चय ही चेखव की कहानियों जैसा है[3]।"

यह अमरकान्त के यथार्थवादी शिल्प का ही परिणाम है कि वे "हत्यारे" जैसी कहानियाँ लिख सके हैं। "हत्यारे" कहानी के पात्र एक निश्चित अकर्मण्यता और गैर जिम्मेदाराना ढंग से शुरू में ही सब कुछ तोडते चलते हैं। इस कहानी के शिल्प के बारे में यशपाल के विचार ध्यान देने योग्य है - "हत्यारे कहानी का सारा ढाँचा, शिल्प छुरे की तरह तेज और आक्रामक है[4]।"

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ·33
2. मौत का नगर (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ·28।
3. अमरकान्त वर्ष। - सं·रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना
   अमरकान्त पर अश्क से ममता कालिया की बातचीत, पृ·2
4. वही, यशपाल से नरेश सक्सेना की बातचीत, पृ·264

अमरकान्त की कहानियों में पात्र-प्रस्तुति

अमरकान्त की कहानियाँ घटनाओं के बल पर नहीं बल्कि चरित्र और स्थिति के संरचनात्मक विधान के बल पर चलती हैं । इसीलिए उनकी कहानियों में पात्रों का महत्व बरकरार रहता है । अमरकान्त ने अपनी कहानियों के अधिकांश पात्र समाज के निचले वर्ग से लिये हैं पर उनकी विशेषता इस बात में है कि वे उन पात्रों से जुडी संवेदनाओं को भी अभिव्यक्ति दे सके हैं । इन संवेदनाओं को केवल गुणों के रूप में नहीं बल्कि दुर्बलताओं के रूप में भी पेश किया गया है । कहने का मतलब यही है कि अमरकान्त ने अपने पात्रों की कमज़ोरियों को नज़रअन्दाज़ नहीं किया है और पात्रों को उनकी कमज़ोरियों के साथ स्वीकार किया है । वस्तुत: अमरकान्त की कहानियों में "शिनोने मरियल चरित्रों के भीतर भी कुछ संवेदनात्मक शिराएँ जागरूक हैं । गुणों के रूप में ही नहीं, दुर्बलताओं के रूप में भी ।" इस दृष्टि से अमरकान्त की "मूस", "विजेता" तथा "दुर्घटना" जैसी कहानियाँ देखी जा सकती हैं ।

"मूस" नामक कहानी में दो स्त्रियों के बीच पिसते हुए मूस का चरित्र अन्तत: ट्रेजिक बन जाता है । परबतिया के समक्ष लगभग टूटा हुआ मूस मुनरी को पाकर अपने पुरुष-दंभ का अनुभव करता है । अपने नये दंभ में वह मुनरी को खो बैठता है । और फिर जब वह पूरी तरह निचुड कर मौत के समीप पहुँचता है तो मुनरी उस पर कृपा करती हुई उसे छोटा बना जाती है । उसके लगातार छोटेपन में भी लेखक उसकी संवेदना को ज़रूर पकड सका है जो

।· अमरकान्त वर्ष । : सं· रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना - परमानंद श्रीवास्तव का लेख, पृ·167

इन पंक्तियों में व्यक्त है - "मूस का जी न मालूम कैसा होने लगा । उसको लगा कि अगर उसने उस दिन भूनरी को काँवर से मारा न होता तो वह उसे छोड़कर कभी न जाती । उसके हृदय में एक असह्य पीड़ा और आकांक्षा उमड़ घुमड़कर उसको बेचैन करने लगी ।[1]" "विजेता" कहानी एक ऐसे दुर्बल मानसिकतावाले व्यक्ति के चरित्र को प्रस्तुत करती है जो अपनी बहन से मित्र के प्रणय को देखकर सोचता है कि वह मित्र-पत्नी को प्रलोभन चातुर्य से फँसाये और इस प्रकार वह मित्र को अपमानित करे । पर इस प्रक्रिया में होता यह है कि वह सचमुच मित्र की पत्नी को चाहने लगता है पर प्रतिशोध की भावना के कारण वह अपने ही प्रेम का व्यापक प्रचार करता है और इसका परिणाम यह निकलता हैकि उसका मित्र ही अपनी पत्नी की हत्या कर देता है और अब यह विजेता पश्चाताप से भर जाता है ।

"दुर्घटना" कहानी एक शहरी व्यक्ति के दुर्बल मनोविज्ञान को प्रस्तुत करती है । वह जिस ग्रामीण व्यक्ति को हेय और उपेक्षणीय समझता है अंत में उसीसे मदद माँगने केलिए लाचार होकर उस ग्रामीण युवक की चापलूसी करने पर उतारू हो जाता है और अंत में तो उसकी चापलूसी बड़ा ही निरर्थक रूप ले लेती है जब वह उस ग्रामीण युवक के प्रति अपनी चिन्ता जताता है ।

अमरकान्त ने अपनी कहानियों के अधिकांश पात्र समाज के निचले वर्ग से लिये हैं - "आर्थिक रूप से विपन्न, आधी ओढ़ने-आधी निचोड़ने वाले बुजुर्ग, छोटे क्लर्क या बेकार नवयुवक अमरकान्त के प्रिय पात्र हैं, और अभाव किस तरह नैतिकता और संस्कारों को तोड़ता है - उसका सशक्त अध्ययन क्षेत्र है[2]।" "जिन्दगी और जोंक" का "रजुआ", मूस के

---

1. देश के लोग (कथा संग्रह) - अमरकान्त, पृ.40
2. अमरकान्त वर्ष । - सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना राजेन्द्र यादव का लेख, पृ.19।

"मूस", "मुनरी", "परबतिया", "नौकर" का "जन्तु", "डिप्टी-कलक्टरी" के "शंकलदीपबाबू", "छिपकली" के "रामजीलाल" आदि ऐसे ही पात्र हैं जो या तो समाज के निम्नतम दर्जे के हैं या छोटे क्लर्क आदि हैं ।

अमरकान्त के लगभग सारे पात्र हर समस्या का सामना करते हुए भी जिन्दगी से चिपके रहने की कोशिश करते हैं । यह इसलिए है कि उनके पात्रों में एक अदम्य जिजीविषा है । "जिन्दगी और जोंक" कहानी में रजुआ खुद जिन्दगी को चकमा देकर जिन्दा रहना चाहता है, यद्यपि उसे यह नहीं पता कि उसे क्यों जिंदा रहना चाहिए । "डिप्टी कलक्टरी" "दोपहर का भोजन", "नौकर" जैसी कहानियों में जिन्दगी के साथ पात्रों का सिलसिलेवार लेखक ने अत्यंत सूक्ष्म स्तरों पर करवाया है । यहाँ पर राजेन्द्र यादव का यह आरोप ध्यान देने योग्य है - "अमरकान्त का शायद ही कोई पात्र अपनी नियति या स्थिति को बदलने की बात सोचता या करता हो । जहाँ-जहाँ ऐसा है वहाँ उठे हुए उबाल की तरह फौरन ही ठण्डा हो गया है ।"[1] इस आरोप का उत्तर यही है कि अमरकान्त अपनी विचारधारा को अपने पात्रों पर लादना नहीं चाहते । असम्भव को सम्भव करना प्रगतिशील राजनीति का लक्षण है न कि प्रगतिशील रचना का । "विचारधारा का रचना में योगदान वास्तविकता और यथार्थ से टकराकर होता है । विचारधारा कोई साँचा नहीं है जिसमें रचना ढाली जाए । विचारधारा लेखक को दृष्टि देती है । अमरकान्त के पास प्रगतिशील दृष्टि न होती तो रजुआ जैसे पात्र की जिन्दगी पर कहानी न लिखते ।"[2]

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना राजेन्द्र यादव का लेख, पृ.193
2. वही, डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी का लेख, पृ.124

अमरकान्त के यहाँ पात्रों की विशिष्ट भंगिमाओं को चित्रित करने के लिए उन पर नाना प्रकार के पशुओं-पक्षिओं की भंगिमाओं को आरोपित किया गया है । उनकी कहानियों में पशु-पक्षी जैसा आचरण करने के बाद मनुष्य फिर मनुष्य रूप में आ जाता है । अमरकान्त के यहाँ पात्रों को पशु-पक्षी रूप में इसीलिए चित्रित किया गया है कि विशिष्ट परिस्थितियों में पात्रों की बाह्यान्तर स्थिति को सामने लाया जा सके । "सामाजिक चित्रण के लिए यह पद्धति आदमी को पूरी तरह पशु-पक्षी में रूपान्तरित कर देने की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है[1] ।"

भाषा

नयी कहानी के दौर में शिल्प के क्षेत्र में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए उनमें भाषा संबंधी परिवर्तन काफी महत्वपूर्ण है । नयी कहानी ने पुरानी भाषा के बाहरी चमत्कार को नष्ट कर उसमें एक नया जीवन भरा । कमलेश्वर के शब्दों में कहा जाय तो, "भाषा मृत या किताबी नहीं रह गई और सारे जोखिमों को उठाती हुई वह मनुष्य की हर वृत्ति, हर संवेदन के साथ उसीमें से प्रस्फुटित हुई[2] ।" दूसरे शब्दों में कहा जाय तो नयी कहानी ने भाषा की जडता को तोडा । व्यक्तिगत और किताबी भाषा से कहानी की भाषा को अलग कर उसमें मनुष्य की बोली की भाषा और इस प्रकार नये अर्थों को तलाशा । नई कहानी में भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र न रहकर अनुभव की सक्रियता का परिचायक है ।

---

1. अमरकान्त वर्ष । : सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी का लेख, पृ.124
2. आधुनिक हिन्दी कहानी - सं.गंगाप्रसाद विमल - कमलेश्वर का लेख, पृ.113

अमरकान्त ने अपनी कहानियों में यथार्थ को उसकी पूरी कठोरता और ठोसपन के साथ व्यक्त करने के लिए एक जीवन्त भाषा की तलाश की है । यह भाषा उनके चारों ओर के जीवित परिवेश से ढूँढी गई है । इसका एक उदाहरण उनकी चर्चित कहानी "जिन्दगी और जोंक" का यह अंश है - "चौकी के सामने एक बेंच पर बैठे पुलिस के दो-तीन सिपाही कोई हंसी-मजाक कर रहे थे और उनसे थोडी ही दूर पर नीचे एक नंगी औरत बैठी हुई थी । वह औरत एक पगली थी, जो कई दिनों से शहर का चक्कर काट रही थी । वह औरत बदसूरत, काली तथा निहायत गंदी थी । ....रजुआ उस पगली के पास ही खडा था । वह कभी शंकित आंखों से पुलिसवालों को देखता, फिर मुंह फैलाकर हंस पडता और मुटुर मुटुर पगली को ताकने लगता[1] ।"

इसी तरह "नौकर" कहानी का यह अंश भी अमरकान्त की भाषा की जीवन्तता को प्रकट करता है - "तड्के ही उठकर जन्तू आंगन और बरामदे में सोनेवाले प्राणियों की बडी-बडी खाटों को भीतर करता । कुछ लोग उठने में लेट लतीफ थे और उनको झिनकती हुई मक्खियों के सहारे छोड्कर वह घर को शुरू से आखिर तक झाडने-बहारने में लग जाता[2] ।"

अमरकान्त की भाषा ऊपरी तौर पर तो सीधी-सादी दिखाई देती है पर उनकी भाषा में संवेदना की गहराई कम न ही है । उदाहरणार्थ उनकी कहानी "शुभचिन्ता" की ये पंक्तियां - "ज्ञान की आंखों के सामने

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियां, पृ.55-56
2. अमरकान्त की कहानियां (भाग - एक), पृ.79

नीचे के अक्षर धुंधले से हो गये । शेष पंक्तियाँ जल्दी जल्दी बेमन से पढी । फिर पत्र लिफाफे में छोडकर यथास्थान रख दिया और सिर झुका कर कमरे में धीरे-धीरे टहलने लगा[1] ।"

"फर्क" कहानी की इन पंक्तियों में भी अमरकान्त की भाषा की संवेदनात्मक शक्ति का परिचय मिलता है - "उसका बाप मर चुका था और उसकी माँ ने दूसरी शादी कर ली थी । उसकी माँ का दूसरा पति उस पर भारी अन्याय करता है । वह अपने लड़के को तो खूब शौक से रखता है, पर उसको बहुत कष्ट देता है[2] ।"

अमरकान्त ने "हत्यारे" नामक कहानी में तो एक ऐसी चौकानेवाली भाषा का प्रयोग किया है जिसके द्वारा वे वर्तमान सामाजिक व्यवस्था पर कटु टिप्पणी करते हैं -"वे अकसर अपने दायें और बायें अत्यधिक नाराज़ी से छूटते थे । एक बार जब भड़कीले वस्त्रों से सज्जित कुछ छात्राओं का दल सुगन्ध उडाता हुआ बगल से गुजरा तो उन्होंने होंठ सिकोड़कर चुम्बन की आवाज़ें पैदा कीं । जब वे बाजार के दूसरे छोर पर पहुंच गये तो उन्होंने सरदार की दूकान के सामने खड़े होकर बादाम का शर्बत पिया, बनारसी पानवाले के यहाँ जाकर चार-चार बीडे मगही पान खाये और अन्त में बायीं पटरी से वापस लौटने लगे[3] ।"

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अमरकान्त की भाषा में रवानी है और वह समसामयिक जीवन संदर्भों को अभिव्यक्ति देने में समर्थ है उनकी भाषा की जीवन्तता का परिचय डॉ॰ नामवरसिंह के इस कथन से

---

1. देश के लोग (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ॰77
2. मित्र मिलन तथा अन्य कहानियाँ, पृ॰22
3. देश के लोग (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ॰44-45

मिलता है - "अमरकान्त की भाषा प्रेमचन्द की परम्परा का अद्यतन विकास है : वही सादगी और वही सफाई है।[1]"

सांकेतिकता

सांकेतिकता नयी कहानी के शिल्प की एक प्रमुख विशिष्टता रही है । कहानीकार अपनी कहानी में ऐसा कोई संकेत देता है जिससे न सिर्फ कहानी का पूरा "टोन" ही निर्धारित होता है बल्कि कहानी एक से अधिक आयामों वाले अर्थों को व्यंजित करने में सफल हो जाती है । "नयी कहानी" दौर में निर्मल वर्मा, राकेश, कमलेश्वर, भीष्म साहनी, राजेन्द्र, यादव जैसे लेखकों ने सांकेतिकता का सफल प्रयोग कर कहानी को नयी अर्थवत्ता से लैस किया । अमरकान्त की कहानियों में भी सांकेतिकता के लक्षण मौजूद हैं ।

"दोपहर का भोजन" कहानी निम्नमध्यवर्गीय परिवार की अभावग्रस्तता और दरिद्रता की कहानी है पर कहानी में एक संकेत ऐसा उभरता है जो इस अभावग्रस्तता और दरिद्रता से भरे जीवन के एक और पहेलु को उजागर करता है । यह संकेत इस वाक्य में है - "गंगाशरण बाबू की लड़की की शादी तय हो गई । लड़का एम.ए. पास है।[2]"

---

1. कहानी - नई कहानी - डॉ. नामवर सिंह, पृ.47
2. अमरकान्त की कहानियाँ (भाग - एक), पृ.121

"मौत का नगर" साम्प्रदायिक दंगों के संदर्भ में लिखी गई कहानी है । लेखक ने कहानी में कई संकेतों द्वारा वातावरण की भयावहता को उभारा है । कुछ संकेत ये हैं - "वह पतली सड़क विधवा की मांग की तरह सूनी थी[1] ।" इस वाक्य में मृत्यु का भय संकेतित है । "उनके शरीर ताजिये की तरह हिल रहे थे[2] ।" इस वाक्य में लेखक धार्मिक संकीर्णता की ओर संकेत करता है । इस प्रकार के कई संकेत कहानी में दिये गये हैं जो हिंसात्मक वातावरण की अन्दरूनी प्रतिक्रियाओं को उभारते हैं ।

"गगनबिहारी" नामक कहानी में भी अमरकान्त ने सांकेतिकता के लक्षण दिखाये हैं जैसे यह वाक्य - "तो करो यही तुम भी, बेटा । कोई गम नहीं, मैं तो अभी जिन्दा हूँ ही[3] ।"

इस वाक्य से लेखक के कथन की सांकेतिक विशेषता स्पष्ट होकर सामने आती है । इस वाक्य द्वारा बाप अपने बेटे को नालायक कहना चाहता है । पर इस कथन की विशेषता इस बात में है कि अमरकान्त बाप से बेटे को स्पष्ट रूप में नालायक न कहलवाकर एक संकेत द्वारा असलीयत को स्पष्ट कर देते हैं और इस प्रकार सांकेतिक अर्थवत्ता का परिचय देते हैं ।

अमरकान्त की कुछ कहानियों के पहले वाक्य ही कहानी के पूरी चाल-चालन को सांकेतिक रूप में स्पष्ट कर देते हैं । "असमर्थ हिलता हाथ" तथा "हत्यारे" जैसी कहानियों में यह बात स्पष्टता देखी जा सकती है ।

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियां, पृ.32
2. वही, पृ.32
3. देश के लोग (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ.55

"असमर्थ हिलता हाथ" का पहला वाक्य वह है - "झींगरों के स्वर में रात की खामोशी झनझना रही थी।"[1] इस वाक्य द्वारा कहानीकार पूरी कहानी के चाल-चालन को तो स्पष्ट करता ही है साथ ही उस विडम्बना की ओर भी संकेत करता है जो पूरी कहानी के केन्द्र में है।

"हत्यारे" कहानी की शुरूआत इस वाक्य से होती है - "बुधवार की एक शाम को पान की एक दुकान पर दो युवक मिले। आकाश, साफ, नीला और खुशनुमा था और हवा आने वाले मौसम की स्मृति में चंचल।"[2] यहाँ पर "आने वाले मौसम की स्मृति में चंचल" यह प्रयोग लेखक ने जानबूझकर किया है जिससे कहानी का पूरा चाल - चलन तो स्पष्ट होता ही है, साथ ही उन दो युवकों का स्वभाव भी जो चंचल प्रकृति के हैं, इस संकेत द्वारा उभर कर सामने आता है।

इस तरह कहा जा सकता है कि अमरकान्त ने अपनी कहानियों में सांकेतिकता का कुशल प्रयोग किया है - "अमरकान्त की सीधी सरल सी लगनी वाली कहानियों में इस प्रकार की बेबाक शब्द छवियाँ बहुत मिलेंगी जो कहानी के संकेतों को और अधिक नुकीली बनाती है।"[3]

प्रतीकात्मकता तथा बिम्बात्मकता

अमरकान्त ने अपनी कहानियों में प्रतीकों तथा बिम्बों का बडा ही सहज विन्यास किया है। इसीलिए कहीं भी यह नहीं लगता कि लेखक ने इनके लिए कोई श्रम किया है। "जिन्दगी और जोंक", "घुंडसवार"

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.37
2. देश के लोग (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ.41
3. अमरकान्त वर्ष। : सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना विजय मोहन सिंह का लेख, पृ.313

"काली छाया", "नौकर" जैसी कहानियों में अमरकान्त ने सार्थ प्रतीकात्मक प्रयोग किए हैं ।

"जिन्दगी और जोंक" कहानी में अमरकान्त ने "जोंक" के प्रतीकात्मक प्रयोग द्वारा रजुआ की दयनीय हालत के बीच उसकी जिजीविषा के संघर्ष को उभारा है - "वह मरना न चाहता था, इसलिए जोंक की तरह जिन्दगी मे चिपटा रहा । लेकिन लगता है जिन्दगी स्वयं जोंक सरीखी उससे चिपटी थी और धीरे-धीरे उसके रक्त की अंतिम बूँद तक पी गई ।"[1]

इसी प्रकार "घुंडमवार" कहानी में "घुंडमवार" के प्रतीक द्वारा निम्न मध्यवर्गीय लोगों की कमजोर मानसिकता, "नौकर" कहानी में "जन्तु" के प्रतीक द्वारा नौकर का पालतू-पशु के रूप में उपयोग किया जाना, "छिपकली" में "छिपकली" के प्रतीकात्मक विनियोजन द्वारा रामजीलाल जैसे निष्क्रीय, आलसी लोगों का चित्रण अमरकान्त ने किया है ।

अमरकान्त ने अपनी कहानियों में सार्थक बिम्बों का प्रयोग किया है । दो सफल प्राकृतिक बिम्बों का प्रयोग इस अंश में देखा जा सकता है - "राम घर से बाहर निकला । उसने कौएँ की भाँति सिर घुमाकर शंका से दोनों ओर देखा । ऊपर आकाश एक स्वच्छ, नीले तम्बू की तरह तना था । सामने पार्क में तथा मकानों और वृक्षों के शिखरों पर एक सुहावनी धूप फैली थी । इस समय तक सारा मोहल्ला एक मीठे शोरगुल्ल से गूंजने

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.64

और चहचहाने लगता था, लेकिन अब कहीं भी औरतें और बच्चे दिखाई नहीं दे रहे थे। चारों ओर एक भयावह सन्नाटा कुण्डली मारकर बैठा था।"[1]

इस अंश में दो सार्थक बिम्ब उपयोग में लाये गए हैं जो अपनी अर्थवत्ता में सफल हैं - पहला है - "आकाश एक स्वच्छ नीले तम्बू की तरह तना था।" दूसरा है - "भयानक सन्नाटा कुंडली मारकर बैठा था।"

इसी तरह "महान" शीर्षक कहानी में भी कई बिम्बों का प्रयोग लेखक ने किया है जैसे - "जैसे भादों की अंधेरी रात में कुत्ते भौंकते हैं।"[2]

"वह लंगूर की तरह कूद पड़ता।"[3]

"जितने शरीर में रोएं हैं।"[4]

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अमरकान्त वे अपनी कहानियों में प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग बढी ही कुशलता से किया है और उनके ये प्रयोग कहानी की अर्थ-संप्रेषणीयता में सहायक है।

यूँ तो अमरकान्त ने अपनी कहानियों में शिल्प का कोई चमत्कार या वैशिष्ट्य नहीं दिखाया है पर फिर भी उनकी कहानियों का अपना ही एक शिल्प है जो अत्यंत सीधा-सादा और सहज होते हुए भी पाठकों को प्रभावित करता है। अमरकान्त ऐसे शिल्प को कोई अहमीयत

---

1. अमरकान्त - प्रतिनिधि कहानियां में संकलित "मौत का नगर" कहानी से, पृ.29-30
2. मौत का नगर (कथा-संग्रह) - अमरकान्त, पृ.152
3. वही
4. वही

नहीं प्रदान करते जो सामाजिक अपेक्षाओं की पूर्ति करने में असमर्थ है, उन्हीं के शब्दों में "जब साहित्य का उद्देश्य सामाजिक वास्तविकताओं से विमुख करना, आत्मगत सत्यों को प्रक्षेपित करना, यथार्थ द्रोही भाषा का निर्माण करना तथा झूठी आधुनिकता का बहाना मात्र हो तो ऐसा साहित्य प्रयोजनहीन हो जाता है[1]।" अन्तत: कहा जा सकता है कि अमरकान्त का शिल्प अत्यंत विलक्षण यथार्थ पूर्ण और अपने सीधे सादेपन में भी विशिष्टता लिये हुए हैं। "शिल्प का एक रूप होता है, जिसे हम शिल्प-विहीन-शिल्प-आर्ट-लेस आर्ट कहते हैं। टोल्स्टाय ने इसे बहुत ऊँची कला माना है[2]।" कहने की ज़रूरत नहीं कि अमरकान्त इस कला में माहिर है।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

---

1. अमरकांत वर्ष। - सं॰रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना अमरकान्त से सत्यप्रकाश मिश्र का साक्षात्कार, पृ॰110
2. वही, उपेन्द्रनाथ अश्क से ममता कालिया की बातचीत, पृ॰274

उपसंहार

प्रेमचन्द के पहले हिन्दी कथा-साहित्य की न तो कोई निश्चित दिशा थी और न ही कोई सुगठित रूप । प्रेमचन्द से पूर्व कहानी को सिर्फ मनोरंजन का साधन समझा जाता था । इस तथाकथित "मनोरंजन" के नाम पर हर तरह की जासूसी, तिलस्मी तथा एय्यारी की कहानियाँ लिखी जाती थी । इन कहानियों का समाज के प्रति कोई दायित्व नहीं था । प्रेमचन्द ने ही हिन्दी कहानी को सर्वथा नूतन दिशा और आकार प्रदान किया । उन्होने कहानी को समाज से अन्तर्सबद्ध किया । जो कहानी सिर्फ मनोरंजन का साधन बन गई थी उसे प्रयोजनयुक्त बनाया ।

हिन्दी कथा-साहित्य में एक सर्वथा नूतन-भावबोध की शुरूआत प्रेमचन्द ने ही की है । यह नूतन-भावबोध प्रेमचन्द के अन्तिम दौर की कहानियों - "शतरंज के खिलाडी", "पूस की रात" तथा "कफन" में परिलक्षित होता है । इन कहानियों में प्रेमचन्द ने भारत के परम्परागत ढाँचे को

चुनौती दी है । तटस्थ और निर्मम दृष्टि से चीज़ों, स्थितियों और समस्याओं को देखने-दिखाने का प्रयास किया है । यही कारण है कि प्रेमचन्द ने इन कहानियों के अंत को खुला छोड दिया है । ऐसा इसलिए किया गया है क्योंकि "इन कहानियों में जिस यथार्थ का साक्षात्कार कराया गया है । वह हमें स्थितियों के पीछे की स्थितियों तक ले जाता है ।"[1]

प्रेमचन्द ने जहाँ कहानी के कथ्य को बदला वहीं उसके शिल्प में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने का प्रयास किया । प्रेमचन्द ने कहानी की भाषा में ज़िन्दगी के मुहावरे और रवानी को भरा । उन्होंने कहानी की भाषा में नई ओजस्विता लाने का प्रयास किया । प्रेमचन्द ने कहानी के शिल्प को इतना बदला कि उनकी श्रेष्ठतम कहानियों में शिल्प को कथ्य से अलग कर देख पाना संभव नहीं है ।

प्रेमचन्द ने कहानी की रूढ़ और जड परिभाषा को बदला । उन्होंने अपनी कहानियों में मनुष्य को उसके यथार्थ परिवेश में ला खडा किया है और उसे इतिहास की विसंगतियों से जूझते हुए दिखाया है जो उनके दृष्टिकोण की नवीनता का परिचायक है - "प्रेमचन्द की कहानियों में "नएपन" की वे सारी विशेषताएँ लक्षित होती हैं, जिन्हें आधुनिक कहानी के "नएपन" के दावे में प्राय:सिद्ध करने की चेष्टा की जाती है ।"[2]

इस प्रकार प्रेमचन्द ने हिन्दी कथा-साहित्य में उस स्वस्थ-परंपरा की नींव डाली जिसे बाद में "प्रेमचन्द परम्परा" कहा गया । इस परंपरा को

---

1. आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी - डॉ. नरेन्द्र मोहन, पृ.18
2. आधुनिक कहानी का परिपार्श्व - लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ.42

ग्रहण कर, हिन्दी कथा-साहित्य को विकास के पथ पर अग्रसर कराने का काम कई कहानीकारों ने किया है ।

प्रेमचन्द ने जिस स्वस्थ परंपरा की शुरूआत की थी वह सन् 1940-50 ई॰ के बीच अवरुद्ध हो गई । इस दौर के कहानीकारों ने अपनी कहानियों में सामाजिक-बोध का निर्वाह करने के बजाय मानव-मन की निगूढतम समस्याओं का चित्रण किया । इसका परिणाम यह हुआ कि इस दौर में कहानी आम आदमी की जिन्दगी को चित्रित न कर सकी । इस दौर में यशपाल जैसे कहानीकारों ने अवश्य ही सामाजिक दायित्व-बोध का परिचय दिया पर वे भी सैद्धान्तिकता के फेरे में पड गये । इन कारणों से इस दौर में प्रेमचन्द परम्परा का ह्रास हुआ ।

"नई-कहानी" दौर में कहानीकारों ने एक-बार फिर प्रेमचन्द-परम्परा को पुनर्ज्जीवित करने की आवश्यकता को महसूस किया । इस दौर में कमलेश्वर, मोहन राकेश, भीष्म साहनी, मार्कण्डेय, फणीश्वरनाथ "रेणु", ज्ञानरंजन इत्यादि ने प्रेमेचन्दे-परंपरा में प्राण फूंकने का प्रयास किया । इन कहानीकारों ने प्रेमचन्द की परम्परा को इस माने में आगे बढ़ाया कि वे भी प्रेमचन्द के समान ही सामाजिकता की भावना से जुडे तथा नयी भाषा और शिल्प को खोजा ।

इसी परम्परा में आनेवाले कहानीकार हैं - अमरकान्त । अमरकांत यह मानते हैं कि "साहित्य में जीवन की गहरी संवेदना, व्यापक सहानुभूति और प्रगतिशील दृष्टि से चित्रण आवश्यक है ।"[1] वे प्रेमचन्द की कहानियों के

1॰ अमरकान्त वर्ष । - सं॰रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना डॉ॰ सत्यप्रकाश मिश्र द्वारा अमरकान्त से प्रस्तुत साक्षात्कार, पृ॰116

समर्थक हैं क्योंकि "प्रेमचंद की "कफन", "गोदान", "पूस की रात" तथा अन्य कई रचनाएँ हमको इतिहास की समझदारी तथा प्रगतिशील संवेदनात्मक ज्ञान से आलोकितकरती है[1]।" वे प्रेमचन्द-परम्परा को निरन्तर विकास-पथ की ओर ले जाने का प्रयास करते हैं क्योंकि उन्हीं के अनुसार "कहानी की मूलधारा प्रेमचन्द से जुडी हुई है[2]।"

प्रेमचन्द की परम्परा का पुनरावर्तन अमरकान्त की कहानियों में हुआ है। रोजमर्रा जीवन के यथार्थ से अमरकान्त अपनी रचनाओं के लिए सामग्री पाते हैं और उन्हें अपने अनुभवों से संयोजित कर रचना में प्रस्तुत करते हैं। आम यथार्थवादी लेखक के समान कोरे यथार्थ को ही रचना में प्रस्तुत करना उनका अभिमत नहीं है वे यथार्थ को अपनी सामाजिक सोच से जोड़कर सार्थक और सारगर्भित बनाते हैं प्रेमचन्द के समान ही उनका मुख्य सरोकार मनुष्यता के साथ अपना मज़बूत और प्रत्यक्ष रिश्ता कायम करना है जो आज की सामाजिक व्यवस्था में अभिशाप ग्रस्त बनता जा रहा है।

प्रेमचन्द की कहानियों में पाये जानेवाले सभी प्रगतिशील तत्व अमरकान्त की कहानियों में लक्षित किये जा सकते हैं - "अमरकान्त में हम प्रेमचन्द परम्परा के एक समर्थ रचनाकार को देखते हैं[3]।" प्रेमचन्द की कहानियों में उनकी करुणा हमेशा ऐसे पात्रों के साथ होती है जो पशु-स्तर पर जीने को बाध्य है। "कफन" के "घीसू" और "माधव" तथा "पूस की रात" का "हल्कू" ऐसे ही पात्र हैं। अमरकान्त की कहानियाँ भी

---

1. अमरकान्त वर्ष। - सं.रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना अमरकान्त से डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र द्वारा प्रस्तुत साक्षात्कार, पृ.116
2. वही, पृ.117
3. प्रेमचन्द - विरासत का सवाल - शिवकुमार मिश्र, पृ.215

पशु-स्तर पर जी रहे पात्रों के कारुणिक प्रसंग उभारती हैं। "जिन्दगी और जोंक" का रजुआ" तथा नौकर का "जन्तु" ऐसे ही पशु-स्तर पर जी रहे पात्र हैं जिनकी जीवन-स्थितियाँ बेहद कारुणिक है। पर प्रेमचन्द के समान ही अमरकान्त की विशेषता इस बात में है कि उनके कारुणिक प्रसंग भावात्मक और रोमानी वातावरण की सृष्टि नहीं करते बल्कि उनके कारुणिक प्रसंग पात्रों को उनके यथार्थ परिवेश में ला खड़ा करते हैं। उनके ये प्रसंग सेन्टिमेन्टल न होकर आयरनिकल है।

अमरकान्त में प्रेमचन्द से मिलता-जुलता गुण है - स्थितियों की भयावहता या आतंक का निर्मम तटस्थता से चित्रण। अमरकान्त जब कभी अपनी कहानियों में आतंक भरी स्थितियों का चित्रण करते हैं तब वे किसी दल या व्यक्ति का पक्ष नहीं लेते और न ही एक दार्शनिक की भाँति सैद्धान्तिक टिप्पणी करते हैं। वे तो स्थिति में छिपे आतंक को अपनी इस निर्मम तटस्थता के फलस्वरूप पाठकों के सम्मुख बड़ी ईमानदारी से रख देते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ प्रामाणिक लगती हैं। उन्होंने अपनी कई कहानियों में निर्मम तटस्थता के कारण ही स्थितियों की क्रूरता और भयावहता की चित्रित करने में अभूतपूर्ण सफलता अर्जित की है। "मौत का नगर" जिन्दगी और जोंक" न्नौकर", "फर्क", "पलाश के फूल", "डिप्टी कलक्टरी" जैसी कहानियाँ इसका प्रमाण हैं।

प्रेमचन्द की कहानियों का एक गुण जो उनकी कहानियों को अन्य साधारण व्यंग्य कहानियों से अलग करता है वह है विद्रूपता। इस विद्रूपता के कारण ही उनकी कहानियों में करुणा का एक ऐसा स्रोत प्राप्त होता है जो उनकी कहानियों को विशिष्ट बना डालता है।

यह गुण अमरकान्त में भी पाया जाता है - "समाज की जिन विद्रूप स्थितियों का चित्रण प्रेमचन्द ने किया, उन्हीं जैसी अन्य विद्रूपताओं पर अमरकान्त ने कटाक्ष किया ।" "डिप्टी कलक्टरी" कहानी में स्थितियों की विद्रूपता के चित्रण द्वारा अमरकान्त आदमी के टूटते स्वप्न, योजनाओं का खुलासा देते हैं तो पात्रों की स्थितियों के विद्रूप चित्रण द्वारा "हत्यारे" कहानी में पुरानी तथा नयी पीढी की चिंतन प्रक्रिया के फेर-बदल को प्रस्तुत करते हैं । इसी प्रकारअपनी अन्य कहानियों "गगन विहारी", "देश के लोग", "छिपकली", "बहादुर" आदि में स्थितियों की विद्रूपता के "प्रत्यक्षीकरण द्वारा वास्तविकता को उद्घोषकर सामने रख दिया है ।

अमरकान्त में पाया जानेवाला प्रेमचन्दीय परंपरा का यह पुनरावर्तन अन्य समकालीन कहानीकारों में भी विकास को प्राप्त हुआ है । भीष्म साहनी, शेखर जोशी, ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह आदि कहानीकारों ने प्रेमचन्दीय परम्परा को विकास के नये आयामों तक पहुँचाया है ।

सपाट रचना-विधान में विशेषता रखनेवाली अमरकान्त कीकहानियों में समकालीन वास्तविकताओं का गहराता हुआ अनुभव और उस अनुभव के अनेक आयाम एक-एक होकर विवृत्ति पाते हैं । समकालीन कहानी में सपाटता की यह रचनाजन्य संभावना है । इस अर्थ में अमरकान्त की कहानियाँ समकालीन रचनाओं केनिकट है । यहाँ रचना की सादगी का अर्थ एक सरल विन्यास में संकलित नहीं है । सरलता ही अमूर्त बिम्ब है - सपाटता ही उसका ठोसपन है । अमरकान्त में यह सादगी उनकी गहरी दृष्टि से उपजी सहजता के रूप में हैं ।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

---

1. अमरकान्त वर्ष । - सं·रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश सक्सेना अब्दुल बिस्मिल्लाह का लेख, पृ·259

संदर्भ-ग्रन्थ सूची

अमरकान्त के कहानी संग्रह

1. मौत का नगर — रचना प्रकाशन, इलाहाबाद
2. देश के लोग — धारा प्रकाशन, इलाहाबाद
3. अमरकान्त:प्रतिनिधि कहानियाँ — राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
4. मित्र-मिलन तथा अन्य कहानियाँ (भाग-एक) — लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
5. अमरकान्त की कहानियाँ (भाग-एक) — संभावना प्रकाशन, इलाहाबाद ।

अमरकान्त के उपन्यास

6. सूखा पत्ता — रचना प्रकाशन, इलाहाबाद
7. ग्राम-सेविका — रचना प्रकाशन, इलाहाबाद
8. कँटीली राह के फूल — लोकभारती, इलाहाबाद

अन्य सृजनात्मक ग्रन्थ

9. मेरी प्रिय कहानियाँ — निर्मल वर्मा, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
10. परिन्दे — निर्मल वर्मा, राजकमल, दिल्ली ।

11. मेरी प्रिय कहानियाँ — रामकुमार
राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

12. खोई हुई दिशाएँ — कमलेश्वर
भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली ।

13. रोये - रोशें — मोहन राकेश
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

14. किनारे से किनारे तक — राजेन्द्र यादव
राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली

15. छोटे-छोटे ताजमहल और अन्य कहानियाँ — राजेन्द्र यादव,
राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली ।

आलोचनात्मक ग्रन्थ

16. नयी कहानी : उपलब्धि और सीमाएँ — डॉ. गोरधन सिंह शेखावत
रामा पब्लिशिंग हाउस, जयपुर

17. नयी कहानी की भूमिका — कमलेश्वर
शब्दकार, दिल्ली

18. मानव-मूल्य और साहित्य — धर्मवीर भारती,
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।

19. समकालीन कहानी : समांतर कहानी — डॉ. विजय
मैकमिलन, दिल्ली

20· आधुनिकता के संदर्भ में हिन्दी कहानी
डॉ· नरेन्द्र मोहन
जयश्री प्रकाशन, दिल्ली

21· कहानी : नई कहानी
डॉ· नामवर सिंह,
लोकभारती, इलाहाबाद

22· कहानी : स्वरूप और संवेदना-राजेन्द्र यादव
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

23· बकलम खुद
मोहन राकेश
राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली

24· स्थितियाँ रेखांकित
सं·गोविन्द मिश्र
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ।

25· नई कहानी : संदर्भ और प्रकृति- सं·देवीशंकर अवस्थी
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

26· आधुनिकता और हिन्दी साहित्य - डॉ· इन्द्रनाथ मदान
राजकमल, दिल्ली

27· एक दुनियाँ समानांतर
संपादक राजेन्द्र यादव
अक्षर प्रकाशन, दिल्ली

28· भाषा और संवेदना
रामस्वरूप चतुर्वेदी
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

29. मोहन राकेश : साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली ।

30. समकालीन कहानियाँ — सं. विश्वंभरनाथ उपाध्याय तथा मंजुल उपाध्याय
स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद ।

31. आधुनिक कहानी का परिपार्श्व-डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

32. आधुनिक हिन्दी कहानी — संपादक गंगाप्रसाद विमल
मैक मिलन, दिल्ली ।

33. अमरकान्त वर्ष । — सं. रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, नरेश मेहसेना,
इलाहाबाद प्रेस प्रकाशन, इलाहाबाद

34. प्रेमचन्द : विरासत का सवाल -शिवकुमार मिश्र,
पीपुल्स लिटरेसी, दिल्ली ।

35. आज की कहानी — विजयमोहन सिंह
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली ।

36. परिवेश की चुनौतियाँ और साहित्य - हेतु भारद्वाज
पंचशील प्रकाशन, दिल्ली

पत्रिकाएँ

1. कल्पना - जनवरी 1956
2. आलोचना - एप्रेल-जून 1977